पंचम अध्याय

'विवेच्य नाटकों का शिल्पगत अध्ययन'

पंचम अध्याय

"विवेच्य नाटकों का शिल्पगत अध्ययन "

5.1 कथा–शिल्प

विवेच्य नाटकों के कथा–शिल्प को देखने से पहले हम यहाँ पर कथा–शिल्प के संदर्भ में चर्चा करना आवश्यक मानते हैं । किसी नाटक के कथानक अथवा वृत्तान्त को अपनी सशक्त कुशल कारीगरी से प्रस्तुत करना ही कथा-शिल्प है । नाटककार अपनी अनुभूति, प्रतिभा और कौशल्य के आधार पर नाटक का सृजन करता है । वह घटना , विचारवस्तु और पात्रों का मेल करके सामाजिक वास्तविकता का चित्र पाठकों के सामने खड़ा कर देता है और इसमें सफल बनना ही सही मायने में नाटक का कथा शिल्प है । रचनाकार रचना का सृजन करता है और वह कुशलतापूर्वक , कारगर और सुचारू रूप से संपन्न हो इस दृष्टि से उसको कथा–शिल्प को सँवारना पड़ता है ।

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटकों की कथा भूमि किस कोटि की है, इसका विवेचन करना भी यहाँ उचित है । उनके दो नाटक " अशोक " और " रेवा " इतिहास मूलक संस्कृति प्रधान नाटकों की परिधि में आते हैं । " अशोक " का कथानक मौर्य सम्राट अशोक के जीवन के पूर्व भाग की घटनाओं से संबंध रखता है । इसमें अशोक का मगध साम्राज्य को हस्तगत करने, अपने बड़े भाई युवराज सुमन की हत्या करने तथा अंत में भाभी शीला के सेवाभाव और आत्मबलिदान के प्रयत्न के प्रभाव स्वरूप परिवर्तित होकर जनकल्याणकारी कार्य करने की मुख्य घटनाएँ वर्णित हैं । इन सभी घटनाओं का आधार अनैतिहासिक बौद्ध ग्रंथों के कपोल कल्पित प्रसंग हैं । "रेवा " नाटककार की दूसरी रचना होने के कारण प्रथम कृति से कुछ परिपक्व एवं प्रौढ़ है । यद्यपि इसका कथानक भी विशुद्ध ऐतिहासिक नहीं है, तथापि इसका आधार ऐतिहासिक

अवश्य है । इस रचना का प्रतिपाद्य दो संस्कृतियों का संघर्ष है । प्रथम पक्ष के प्रतिनिधि हैं काम्बोज के राजकुमार यशोवर्मा जो शस्त्र के बल पर सांस्कृतिक विजय प्राप्त करना चाहते है । ठीक इसके विपरीत आचार्य पुण्ड़रीक है, जो शस्त्र की अपेक्षा शास्त्र से सांस्कृतिक विजय की कल्पना करते हैं । दूसरा पक्ष आशाद्वीप के निवासियों का है, वे अपनी सांस्कृतिक उच्चता के दंभ में अन्य संस्कृतियों को हेय, नगण्य व महत्त्वहीन समझकर किसी से ज्ञान प्राप्ति की चाह न कर अपने को आत्मसंकोची बने रहने में ही अपनी श्रेष्ठता का अनुभव करते हैं । इसके बिल्कुल विपरीत चोलराज और उनकी पुत्री इंदिरा भारत के बाहरी देशों से अपने संबंध प्रस्थापित कर अपने पूर्वजों से अर्जित संस्कृति को प्रसारित करते हैं । इसी सभ्यता और संस्कृति के प्रचार व प्रसार हेतु वे अपने राज्य से प्रत्येक वर्ष समय-समय पर अनेक वितराग ब्राह्मनों , जगत प्रसिद्ध विद्वानो व प्रवीण शिल्पियों के जत्थे विभिन्न द्वीपोंमें भेजते रहते है ।

आगे चलकर चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने " न्याय की रात " नामक नाटक लिखा । प्रस्तुत नाटक में लेखक ने आजाद भारत में स्थित अनेकविध समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया हैं । अब हम विवेच्य नाटकों के कथा-शिल्प को देखेंगे ।

5.1.1. अशोक

"अशोक " चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का पहला नाटक है । यह सन 1932 में प्रकाशित हुआ । जिस प्रकार लेखक ने अपनी प्रत्येक रचना में अपनी संवेदना को व्यक्त किया है इस प्रकार " अशोक" भी इसके लिए अप्वाद नहीं है । इसमें भी लेखक की संवेदना स्थान-स्थान पर झलक उठती है । यह एक ऐतिहासिक आदर्शप्रधान नाटक है । इतिहास को आधार बनाकर इसमें कल्पना का भी सहारा लिया है । प्रस्तुत नाटक में हिंसा और अहिंसा की चरमसीमा लाँधनेवाले सम्राट अशोक के मनोविज्ञान को चित्रित किया है ।

"अशोक " पाँच अंकों में विभाजित नाटक है । प्रत्येक अंक में सात दृश्य विद्यमान हैं । संपूर्ण नाटक में कुल दृश्य पैंतीस हैं । प्रस्तुत नाटक के प्रत्येक दृश्य में स्थानों का

जिक्र भी किया है । वह इस प्रकार हैं -- पाटलिपुत्र , तक्षशिला , तुशाली और वैशाली ।

प्रथम अंक के प्रथम दृश्य से कथानक आरंभ होता है । स्थान पाटलिपुत्र है, समय सायंकाल का है और मगध सम्राट बिन्दुसार के तीनों राजपुत्र सुमन ,अशोक और तिष्य राजप्रसाद के उद्यान में विविध विषय पर विचार विमर्श कर रहे हैं । जिसमें क्षत्रप चण्ड़गिरी ने तक्षशिला के लोगों को धोखा दिया है । अतः वे उसके खिलाफ तथा राजधानी पाटलिपुत्र के विरूद्ध विद्रोह कर चुके हैं । उन्हें सही रास्ते पर लाने हेतु युवराज सुमन, अशोक को समझाते हैं कि तुम्हें वहाँ जाकर स्थिति को अंकित करना होगा । इस विषय में बाधा ड़ालकर तिष्य अपने बड़े भाई सुमन की शादी के संदर्भ में बात छेड़ देता है । दूसरे दृश्य का स्थान तक्षशिला के मुख्य बाजार का एक भाग है । नागरिक चण्ड़गिरी के अत्याचार को खत्म करने हेतु इकट्ठा हुए हैं । तभी अशोक विदेशी युवक का वेश परिधान कर वहाँ चला आता है । अपने परिणामकारक भाषण से वह तक्षशिला की स्वाधीनता का वचन देता है और लोग स्वयं उसे अपना राजा घोषित कर देते हैं । यहाँ पर वर्तमान परिस्थिति का विचार करने पर पंजाब प्रश्न का मद्दा उपस्थित होता है । अशोक तक्षशिला की जनता को वचन देता है कि " अच्छा भाइयों यही सही । सम्राट से आदेश लेकर मैं तक्षशिला को ही अपना केन्द्र बनाऊँगा ।"[1]

तृतीय दृश्य में पाटलिपुत्र के सुरम्य मकान का एक आँगन है समय चाँदनी रात का द्वितीय प्रहर है और कुमारी शीला वीणा बजा रही है । इतने में पिता दीपवर्धन आते हैं । शीला को देखकर उन्हें पच्चीस बरस पूर्व कीउनकी पत्नी की याद आती है जो अब इस दुनिया को छोड़कर हमेशा के लिए चली गयी है । दीपवर्धन और शीला के बीच शीला की शादी के संदर्भ में वार्तालाप होता है । आगे दोनों होलिकोत्सव में शामिल होना तय करते हैं । चौथे दृश्य में होलिकोत्सव का आयोजन तथा पिता बिन्दुसार युवराज सुमन को राजतिलक लगाकर मगध साम्राज्य का सम्राट घोषित करते हैं । पाँचवें दृश्य का स्थान सम्राट बिन्दुसार का महल है । रात के तीन बजे हैं और बिन्दुसार की बेहोशी पर राजवैद्य , युवराज सुमन तथा राजकुमारी चित्रा इलाज करते हैं ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार, अशोक, पृष्ठ – 15 ।

वहाँ शीला भी अपनी सहेली शोभा के साथ युवराज सुमन के शयनकक्ष में आ पहुँचती है । सुमन से परिचय होने पर वे उसे अपने रथ से घर छोड़ आते हैं ।

छठे दृश्य में कामरूप का जंगल है जिसमें राजकुमार तिष्य अपने मंत्री के साथ शिकार खेलने जाते हैं । वहाँ उनकी कापालिक से भेंट हो जाती है जो उन्हें भविष्यवाणी सुनाता है और आगे चलकर जिसके अनुसार कुछ घटनाएँ घट जाती हैं । सातवाँ दृश्य पाटलिपुत्र के नगरभवन में ओयोजित है जिसमें शीला की अन्तर्वेदना और दीपवधर्धन तथा शीला के बीच उसकी शादी को लेकर वार्तालाप का चित्रण आया हुआ है । इससे पता चलता है कि युवराज सुमन के साथ शीला की शादी तय हो चुकी है । यहाँ पर प्रथम अंक समाप्त हो जाता हे ।

दूसरे अंक के पहले दृश्य में वैशाली प्रान्त में आचार्य उपगुप्त का आश्रम स्थित है । प्रभात के समय में बौद्ध भिक्षु गीत गा रहे हैं । उपगुप्त अपने शिष्यों से विश्वास तथा नैतिक मूल्य आदि चीजों का ज्ञान कराते हैं तथा लड़ाई–झगड़े से सुखशांति नष्ट हो जाती है । इस मान्यता को स्पष्ट करते हुए मानवतावाद की मान्यता की प्रतिष्ठापना की है । इसमें पुष्पपुर के क्षत्रप द्वारा बौद्ध भिक्षुओं पर भी घोर अन्याय और अत्याचार हुआ है अतः वे विद्रोह करना चाहते हैं, तब उपगुप्त दूत से संदेशा देते हैं –"... जाओ स्थविर महोदय से कह दो कि वे आदर्श भिक्षु बनकर दिखाएँ । उन पर जो अत्याचार हो रहे हैं, सहन करें और मनुष्यमात्र के लिए अपने हृदय में स्नेह और दया के भाव रखें ।"[1] इसमें गांधीवाद और मानवतावाद का स्फुट विद्यमान है ।

दूसरे दृश्य में गंगा नदी का राजकीय घाट प्रस्तुत है तथा समय साँझ का है । युवराज सुमन और शीला के बीच वार्तालाप होता है । वे विवाह में सीधापन चाहते हैं नहीं तो वर्तमान परिस्थिति में हम देखते हैं कि शादी जैसी मंगलमय घटना को लेकर लोग बातों का अतंगड़ बना देते हैं । इसी प्रकार सिलसिलेवार सात दृश्यों में कथानक बढ़ता चला गया है । जिसमें दिखाया गया है कि सम्राट बिन्दुसार बीमार पड़ गए हैं उनकी हालत चिंताजनक है उन पर राजवैद्य इलाज कर रहे हैं । इधर तक्षशिला में चण्डगिरी और अशोक मिलकर राजधानी पाटलिपुत्र

---

1 चंद्रगुप्त विद्यांकार – अशोक, पृष्ठ – 37 ।

पर आक्रमण कर सम्राट सुमन को गिरप्तार कर स्वयं राजगद्दी पर बैठने की योजना बनाते हैं । अशोक को बिन्दुसार के बाद सुमन का सम्राट होना पसंद नहीं है । सम्राट बिन्दुसार की मौत हो जाती है । सातवें दृश्य मे यह दिखाया है कि अशोक बिन्दुसार की मौत की खबर सुनते ही तक्षशिला से भारी सेना के साथ पाटलिपुत्र पर आक्रमण कर देता हे और सम्राट सुमन को राजबंदी बनाकर कैद में डलवा देता है तथा स्वयं को मगध साम्राज्य का सम्राट घोषित करता है । इसमें वर्तमान परिस्थिति की ओर इंगित करना लेखक का लक्ष्य रहा है । वर्तमान परिस्थिति में भाई, भाई, की कोई अहमियत नही रखता ।

तीसरा अंक भी सात दृश्यों में विभाजित है । प्रथम दृश्य बन्दीगृह का है , जिसमें युवराज सुमन को अशोक ने बंदी बनाया है । अशोक ने आपत्काल में क्रूर ,अन्यायी चण्ड़गिरी की मदद की थी जिसके परिणामस्वरूप चण्ड़गिरी अशोक को सर्वेसर्वा मानता है । वह उसके लिए कुछ भी करने के लिए तैयार है । अशोक की सत्तालोलुपता भी दिनों दिन बढ़ती जाती है । चण्ड़गिरी अशोक पीछे उसके (अशोक के) बीच का काँटा निकालने हेतु सुमन को मारने की योजना बनाता है । उसी समय शीला अशोक से अपने और सुमन की शादी के संदर्भ में बातचीत करती है । इसमें तय यह होता है कि अशोक उनकी शादी में शामिल हो जाएगा । लेकिन अशोक के पीछे राजाज्ञा का उपयोग करके बन्दीगृह में विवाह की निश्चित तिथि पर चण्ड़गिरी बड़ी क्रूरता से सम्राट सुमन का वध कर देता है । अशोक चण्ड़गिरी पर अपना क्षोभ प्रकट करता है लेकिन वक्त निकल चुका था । आचार्य दीपवर्धन शीला की शादी और सुमन की कैद इन बातों को लेकर चिंतित रहते थे, उसमें ही वे सख्त बीमार पड़ जाते हैं ।

चौथे अंक में भी सात दृश्य विद्यमान हैं । इसके प्रथम दृश्य में वैशाली प्रांत में मध्याह्नोत्तर के समय शीला और चित्रा अन्यायी अशोक के खिलाफ जनमत तैयार कर क्रांति और विद्रोह के लिए जनता को उकसाकर अशोक के धमंड को, सत्ता को परास्त करने हेतु जनता को संगठित करने नगर में जनयात्रा निकाल रही हैं । जनता भी उन्हें भारी साथ देती हैं । इस संघर्ष की तैयारी से कथानक काफी रोचक बन पड़ा है । दूसरे दृश्य में आचार्य उपगुप्त से अपने आश्रम में इस संघर्ष की खबर मिलती है । वे शीला और चित्रा से मिलते हैं । तीसरे दृश्य में कथानक मोड़ लेता है । आचार्य उपगुप्त के साथ शीला आश्रम में पहुँचती है तो चित्रा वापस पाटलिपुत्र को

जाती है । उपगुप्त, शीला को अहिंसा के मार्ग पर प्रशस्त होने का उपदेश करते हैं । उपगुप्त के भारी उपदेश के कारण शीला अपना प्रतिहिंसा और विद्रोह का मार्ग छोड़कर गरीब, दीन–दुःखी लोगों की सेवा में जुट जाती है । आचार्य उपुगुप्त के उपदेशों से स्पष्ट है कि वे समाज में नीतिमूल्यों की प्रतिष्ठापना कना चाहते हैं ।

चौथे दृश्य में कामरूप की उपत्य का एक गाँव है । यह भीलों का गाँव है । राजकुमार तिष्य पारिवारिक तथा राजकीय अस्थैर्य के कारण घर छोड़कर कामरूप चले आए हैं । वे भील लोगों के बीच रहकर उनमें सुधार लाते हैं । जो भील अब तक पशुता की वृत्ति को अभी तक सँभाले हुए थे, उनमें वे मनुष्यता के बीज बो देते हैं । पाँचवें दृश्य का स्थान पाटलिपुत्र के राजमहल का अन्तपुर है । रानी तिषि पारिवारिक अस्वास्थ्य के कारण कमजोर बनी हुई है । सम्राट अशोक कलिंग युद्ध में जुट गए हैं साम्राज्ञी तिषि का अन्तर्मन आक्रांत हो उठता है । वह हृदय के साम्राज्य के लिए व्याकुल है । यहाँ तिषि, बहन चित्रा और बेटा कुणाल का चित्रण आया है ।

छठा दृश्य तुशाली के राजपथ पर स्थित है । इसमें भिखारी और पथिकों की अनेकविध समस्या का चित्रण हुआ है । युद्ध के कारण जनता के हालात का सही चित्रांकन इस दृश्य में देखने को मिलता है । सातवाँ दृश्य कलिंग की युद्धभूमि का है । इसमें कलिंग के भयानक युद्ध का चित्रण बड़ा वास्तव बन पड़ा है । इसमें असंख्य लाशें और घायल सैनिकों का चित्रण है । शीला अपने साथियों की मदद से घायलों की सेवा कर रही है । शीला इस भयानक युद्ध और नरसंहार के कारण चिंतित है वह आचार्य उपगुप्त से सवाल करती है कि " यह भयानक जनसंहार कब समाप्त होगा पिताजी ? तव उपगुप्त जवाब देते हैं " कुछ कहा नहीं जा सकता शीला । मानव हृदय का अहंकार इस युद्ध के मूल में है । व्यक्ति का अहंकार जब फैलकर समाज या जाति का अहंकार बन जाता है ,तब उसकी जड़े पाताल तक चली जाती है ।दोनों पक्षों में से जब तक एक पक्ष के अहंकार का पूर्ण नाश न हो जाएगा तब तक यह लड़ाई बन्द न होगी ।"[1] यहाँ लड़ाई–झगड़े के मूल कारण को स्पष्ट कर युद्ध को व्यर्थ और विनाश का द्योतक माना है । विद्यालंकार जी ने इस दृश्य में दृश्यान्तर का प्रयोग किया है । इसमें एक

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 98 ।

सैनिक की व्यथा को स्पष्ट किया है जिसका अभी-अभी विवाह हो चुका था पर अपने नववधु को मिले बिना ही वीरगति को प्राप्त होता है । इस दृश्यान्तर में बांग्लादेश युद्ध की याद आती है । इस दृश्य में कथ चरमसीमा पर है ।

पाँचवाँ अंक सात दृश्यों में विभाजित है । पहले दृश्य में कलिंग युद्ध जारी है । युद्ध चरमसीमा पर आ पहुँचा है । निर्णायक लड़ाई जारी है । युद्धभूमि में अशोक के खेमे में सैनिक वंदना दिवंगत वीर सेनापति चण्ड़गिरी को दी जाती है । कलिंग युद्ध में वीर, मुत्सद्दी क्रूर चण्ड़गेरी मारा जाता है । नए सेनापति के रूप में मौखरी को चुना जाता है । अशोक के युद्ध ज्ञान और कौशल्य का चित्रण इस दृश्य में आया है । दूसरे दृश्य में अशोक की सेना को अन्न की कमी महसूस होती है तब आस–पास के गाँवों को जबरदस्ती से लूटने का आदेश अशोक, सेनापति मोखरी को देता है । तब मौखरी सद्यस्थिति से अवगत कराता है कि " तीस मील की दूरी की आगे के गाँव में भी स्त्रियों ,बच्चों और बूढ़ो को छोड़कर और कोई नहीं बचा महाराज ।"[1] यहाँ पर अशोक की क्रूरता और हृदयहीनता का परिचय मिलता हैं ।

तीसरे दृश्य में कलिंगराज युद्ध मे जय–पराजय के निर्णायक मोड़ पर एक भारी षड़यंत्र का आयोजन करता है । वह यह कि आखरी दाँव समझकर बची–खूची सेना को लेकर रात के समय सोये हुए अशोक पर हमला करके उसका खातमा करना । इस षड़यंत्र की खबर गुप्तचर द्वारा शीला को मिलती है । तब शीला अशोक की जगह अपना प्राण देने का निश्चय करती है । आचार्य उपगुप्त भी आँखों में आँसू भरकर इस महान त्याग के लिए तैयार हो जाते हैं क्योंकि वे जानते थे कि इस भयानक जनसंहार को रोकने के लिए यह उठाया गया कदम ही सही है ।

चौथे दृश्य में षड़यंत्र की निश्चित तिथि को, गुप्त रूप से अशोक को उपगुप्त के आश्रम में लाया जाता है । शीला छद्‌मवेश में अशोक के शयनकक्ष में पहुँचती है । अशोक को उपगुप्त द्‌वारा हुई घटना का समाचार मिलने पर वह आहत होता है और वायु गति से शिविर की ओर निकल पड़ता है । घावों से तड़पती शीला को राजवैद्य उपचार द्‌वारा बचा पाते हैं । अशोक पर इस आत्मबलिदान की भावना और इस घटना का भारी प्रभाव पडता है ।उसका हृदयपरिवर्तन हो जाता है । इस दृश्य से कथानक धीरे-धीरे अंत की ओर बढता चला जाता है । पाँचवाँ दृश्य

पाटलिपुत्र का नगर भवन है । सम्राट अशोक आ. उपगुप्त द्वारा बौद्ध धर्म का स्वीकार करते हैं । धर्म की शरण में आकर सम्पूर्ण जीवन जनकल्याण और धर्म प्रसार तथा अहिंसा के काम में लाने का निश्चय करते हैं । छठे दृश्य में सम्राट अशोक अहिंसा के पुजारी बन जाते हैं । उन्होंने प्राणीमात्र के रक्षणार्थ शिकार करना कानून द्वारा नहीं तो प्यार से लोगों को बंद करने को कहा । उनका पारिवारिक जीवन शांतिमय और सुखमय हुआ । शीला अपने उद्देश्य पूर्ति के हेतु राजभवन छोड़कर सम्राट अशोक के मना करने पर भी चली जाने का निश्चय करती है ।

सातवें दृश्य में पाटलिपुत्र के राजमहल के मुख्यद्वार पर प्रभात समय में शीला को विदा देने के लिए सब नागरिक तथा सम्राट अशोक, तिषि, कुणाल, महेंद्र और चित्रा आदि हाजिर है । सब साश्रु नयनों से शीला को विदा करते हैं । यहाँ पर कथानक समाप्त होता है ।

"अशोक " नाटक के कथा–शिल्प का मूल्यांकन

"अशोक " इतिहास मूलक संस्कृति प्रधान नाटक की परिधि में आता है जिसका प्रकाशन सन 1932 में हुआ । लेखक ने तत्कालीन परिस्थिति की संवेदना को विवेच्य नाटक के माध्यम से व्यक्त किया है । प्रस्तुत नाटक में अंक तथा दृश्य–दृश्यान्तर की भरमार है ।" "अशोक " पाँच अंकों में विभाजित है । प्रत्येक अंक में सात दृश्यान्तर है । प्रथम अंक के छठे दृश्य में दृश्यान्तर है । द्वितीय अंक के पाँचवें दृश्य में दृश्यान्तर है । तृतीय अंक के तीसरे तथा छठे दृश्य में दो-दो दृश्यान्तर हैं । चतुर्थ अंक के दूसरे और सातवें दृश्य में दृश्यान्तर का प्रयोग हुआ है । पाँचवें अंक के चौथे दृश्य में दृश्यान्तर है । इससे लगता है कि लेखक नाटक के रचनातंत्र से अवगत नहीं है । यही बात वे अपने शब्दों में कहते हैं " अशोक " मेरा प्रथम नाटक है आज से सत्ताईस वर्ष पूर्व जब मैंने यह नाटक लिखा था, मुझे रंगमंच के संबंध में बहुत कम ज्ञान था । रंगमंच पर खेले जानेवाले नाटक में पाँच विभिन्न सज्जा के अंक और प्रत्येक अंक में सात–सात विभिन्न सज्जा के दृश्यों की कल्पना भी नहीं की जा सकती । पर यह विश्वास मुझे अवश्य था कि मैं मनोरंजन और दिलचस्पी बनाए रखनेवाले कथानक का न केवल निर्माण कर सकता हूँ , अपितु उसे प्रभावशाली नाटकीय परिधान भी दे सकती हूँ ।"[1] अब लगता है कि

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ– 3 ।

लेखक का विश्वास सार्थक हुआ । अंकों में दृश्य विभाजन की समानता रखी है । प्रस्तुत नाटक रंगमंच की दृष्टि से नहीं लिखा है । स्वयं लेखक " न्याय की रात " की भूमिका में लिखते है " सब से पूर्व मैंने " अशोक " और " रेवा " नाम से जो नाटक लिखे थे, वे रंगमंच के लिए नहीं थे ।"[1]

प्रस्तुत नाटक में नाटककारने अनेक राष्ट्रीय तथा सामाजिक समस्याओं का उद्घाटन किया है । प्रथमतः लेखक का उद्देश्य है कि अशोक के चरित्र के माध्यम से पदलोलुप तथा स्वार्थी व्यक्ति का उद्घाटन करना जिसका कालपरत्वे हृदयपरिवर्तन होता है । युद्धकालीन विभीषिकाओं का चित्रण करना, नीतिमूल्यों का चित्रण करना, नीतिमूल्यों की प्रतिष्ठापना करना, अज्ञान, अंधश्रद्धा ,नारी समस्या, अकाल, महामारी आदि बातों से अवगत करना तथा त्याग की प्रतिमूर्ति स्त्री के चरित्र को उपर उठाना इसकी मूल संवेदना है । प्रस्तुत नाटक का कथाशिल्प सशक्त है । नाटककार उपर्युक्त शिल्प के निर्माण के प्रति सावधान दिखाई देता है ।

5.1.2. **"रेवा"**

" रेवा" चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का द्वितीय नाटक है जिसका प्रकाशन सन 1938 में हुआ था । प्रस्तुत नाटक में पात्रों की भरमार पायी जाती है परंतु नाटक पढ़ते समय पाठक को किसी प्रकार की कठिनाई महसूस नहीं होती । " रेवा " का कथानक पाँच अंकों में विभाजित है । जिस प्रकार " अशोक " में अंक और दृश्य विभाजन समान रूप में था, उस प्रकार " रेवा " में नहीं है । " रेवा " में इस दृष्टि से भिन्नता पायी जाती है । यथा – प्रथम अंक में तीन दृश्य, द्वितीय अंक में चार दृश्य इसके तीसरे दृश्य में दो दृश्यान्तर ,तृतीय और चतुर्थ अंक में पाँच दृश्य ,इन अंकों के तीसरे दृश्य में दो–दो दृश्यान्तर ,पाँचवे अंक में पाँच दृश्य और इसके चतुर्थ दृश्य में एक दृश्यान्तर विद्यमान है । प्रस्तुत नाटक में ऊपर उल्लेखित जो पाँच देश हैं वे हैं –"भारतवर्ष , काम्बोज , चम्पा , आशाद्वीप और कुमारी द्वीप ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –न्याय की रात , पृष्ठ – 19 ।

प्रथम अंक के प्रथम दृश्य से कथानक आरंभ होता है । इसके प्रथम दृश्य में स्थान आशाद्वीप के प्रासादों के निकट एक सामुद्रिक पहाड़ीहै । उस पर शिवमन्दिर सुशोभित है । यह शिवमन्दिर तक्ष के किसी महाशिल्पी ने बनवाया था । इस मन्दिर के महान तपस्वी गुरूदेव को सारा संसार जानता था और वहाँ उनका पट्ट शिष्य सन्दीप रहता था । उस मन्दिर में राजकुमारी रेवा, जो आशाद्वीप की महारानी है, हमेशा शिवजी पर फूल चढ़ाने आती है ।एक दिन तूफान के समय गुरूदेव रेवा को उसके जीवन के संदर्भ में उपदेश करते हैं कि यहाँ इस ओर किसी अन्य देश का राजकुमार बड़ा जहाज लेकर आएगा और वहीं एकमेव तुम्हारा पति होने योग्य है । तुम उसका इंतजार करना, स्वागत करना । इस प्रकार का संदेश देने के पश्चात गुरूदेव भयानक तूफानी समुद्री लहर और बिजली को साक्ष रखकर समुंदर में शरण लेते हैं । तब से राजकुमारी रेवा का एक ही मकसद बनता हैं कि शिवजी की पूजा करना और अपने आनेवाले सपनों के राजकुमार की प्रतिक्षा करना ।

द्वितीय दृश्य में इधर भारतवर्ष में राजा चोलराज और उनकी पुत्री राजकुमारी इन्दिरा अपने देश की संस्कृति तथा कला के प्रतिष्ठापक सिद्ध होते है । वे अपने देश के महान कलाकारों , महान पंडित , व्यवसायपतियों आदि लोगों को जत्थे हर साल अर्थोपार्जन ,व्यवसाय करने हेतु तथा सभ्यता ,संस्कृति और कला के प्रचार–प्रसार हेतु अन्य देशों में भेजते रहते हैं । ताकि भारत देश की संस्कृति तथा अन्य देशों की संस्कृति में आदान–प्रदान स्थापित हो सके । इसके साथ ही वे अपने प्राचीन सांस्कृतिक गौरव को नहीं भूलते । उन्हें सँभालने का काम भी करते हैं । इस दृश्य में एक जत्थे को विदेश में भेजने की तैयारी का चित्रण है ।

तृतीय दृश्य में काम्बोज देश के राजकुमार यशोवर्मा का निजी कमरा है, उसमें राजकुमार यशोवर्मा ,उनका दोस्त जनार्दन और सेनापति श्रीदेव आपस में राजकीय वार्तालाप कर रहे हैं । यशोवर्मा राज्यसंचालन की अपेक्षा साम्राज्यविस्तार को ज्यादा महत्त्व देते है । यशोवर्मा के शब्दों में " मेरी दृष्टि में राज्यसंचालन से भी बढ़कर मेरा कर्तव्य है,राज्य का विस्तार, एक साम्राज्य की स्थापना । मैं वहीं काम करूँगा ।"[1] साम्राज्य विस्तार की दृष्टि से यशोवर्मा कदम उठाना चाहते हैं तभी उनका दोस्त जनार्दन राज्य के गुरू ऋषि पुण्डरीक के संदेश की याद दिलाता है । उनका कहना है कि शस्त्र बल से शास्त्र सदा श्रेष्ठ है । अतः शस्त्रविजय की अपेक्षा

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 35–36 ।

शास्त्रविजय (सांस्कृतिक विजय) ज्यादा महत्त्वपूर्ण है । लेकिन राजकुमार यशोवर्मा साम्राज्य विस्तार के लिए शस्त्र विजय ही उचित मानते हैं । वे अपनी साम्राज्यविस्तार की महत्त्वाकांक्षा को पूर्णत्व प्रदान करने हेतु युद्ध की तैयारी करने की बात अपने सेनापति तथा साथियों से कहते हैं । यहाँ आकर प्रथम अंक समाप्त होता है । इस दृश्य में यशोवर्मा के चाचा और ऋषि पुड़रीक के विचार अप्रत्यक्ष रूप से प्रकट हुए हैं । राजकुमार यशावर्मा इस कथा का नायक है ।

द्वितीय अंक के प्रथम दृश्य में ऋषि पुण्ड़रीक का आश्रम स्थित है । वे अपने छात्रों को नदी, सागर आदि उपमानों के जरिए हृदय की विशालता का परिचय कराते हैं । स्वयं को समुद्र की तरह'स्वप्रतिष्ठ'बनाने का संदेश देते हैं । यहाँ पर स्पष्ट है कि नाटककार ने आचार्य पुण्ड़रीक के माध्यम से गीता के उपदेश,सभ्यता, संस्कृति, विनम्रता आदि बातों की प्रतिष्ठापना करने का प्रयास किया है । आगे चलकर आश्रम में युवराज यशोवर्मा, सेनापति श्रीदेव तथा जनार्दन ऋषि पुण्ड़रीक से मिलने आते हैं उनके साथ साम्राज्य विस्तार और चम्पा पर आक्रमण के बारे में वार्तालाप होता है । ऋषि पुण्ड़रीक उन्हें साम्राज्य विजयी सम्राट के स्थान पर मानव हृदय–विजयी सम्राट बनने का संदेश देते हैं ।चम्पा पर आक्रमण के बजाय उनके साथ दोस्ती करने को कहते है पर यशोवर्मा नहीं मानते । उनकी बातों पर विचार करने का आश्वासन देते हैं । पुण्ड़रीक हार्दिक सद्भिलाषा प्रकट करते हुए उन्हें आशीर्वाद देते हैं । यहाँ पर प्रखर राष्ट्रवाद की चेतना द्विगुणीत होती दिखाई देती है ।

द्वितीय दृश्य में स्थान आशाद्वीप के राजमहलों की ऊँची छत पर रेव खड़ी है । वह अपनी सखियों के साथ पूजा करने हेतु**शिव**मंदिर चली जाती है । साथ-साथ वह हर समय अपने सपनों के राजकुमार की राह देखती रहती है । इस हेतु उसने शिवमंदिर पर रात भर प्रकाश रहने की व्यवस्था की है ताकि अचानक भटका हुआ जहाज आशाद्वीप की ओर आ सके । आशाद्वीप शांतिदूत का कार्य करता है । आशाद्वीप स्वर्गसमान प्रतीत होता है । उसकी ओर देखकर ऐसा लगता है जैसे आसमान का स्वर्ग धरती पर उतर आया हो ।

तृतीय दृश्य में युवराज यशोवर्मा चम्पा पर आक्रमण कर देते हैं । चम्पा की युद्धभूमि में सेनापति श्रीदेव का शिविर है । इसमें सेनापति श्रीदेव युवराज के बारे में चिंतित हैं । जर्राह और द्वारपाल सेनापति से युवराज के संदर्भ में वार्तालाप करते हैं । इससे यथार्थ स्थिति से सभी लोग जान जाते हैं कि युवराज यशोवर्मा युद्धभूमि में अकेले फँस गए हैं । जनार्दन और श्रीदेव दोनों उन्हें ढूँढने अलग अलग दिशा में चले जाते हैं ।

दृश्यान्तर हो जाता है । इधर युवराज यशोवर्मा युद्धभूमि से सुरक्षित बाहर निकले हुए हैं । वे अपने घोडे को युद्धभूमे से तेज गति से दौड़ाते हुए बच निकलते हैं । यशोवर्मा सोचते हैं – चम्पावासी वीर हैं उन्होंने अग्निचुर्ण का ज्ञान पाया है इसी कारण हमारी हार हो गई । यहाँ यशोवर्मा की मनःस्थिति का चित्रण हुआ है । दूसरे दृश्यान्तर में जनार्दन और श्रीदेव यशोवर्मा को ढूँढ़ते–ढूढ़ते यशोवर्मा के सैन्यशित्रिर में आ जाते हैं ।वहाँ शिविर जल चुका था । वहाँ रक्षक उन्हें बताता है कि चम्पावासियों ने कुछ गोले शिविर पर फेंके जिसके कारण शिविर जल गया । जनार्दन तथा श्रीदेव इस भारी पराजय पर चिंतित हैं कि यशोवर्मा का अभी तक पता नहीं । जनार्दन सेनापति श्रीदेव को काम्बोज की रक्षा हेतु वापस भेज देता है और स्वयं युवराज को ढूँढ़ने निकल पड़ता है ।

चतुर्थ दृश्य में कुमारीद्वीप नाम का समृद्ध द्वीप है । भारत वर्ष और चम्पा के मार्ग पर यह आता है । कुमारीद्वीप में सायंकाल का समय है, शिवमंदिर का स्थान है ।यहाँ भारतवर्ष के व्यापारी मकरन्द से युवराज यशोवर्मा की भेंट हो जाती है । यहाँ पर दूसरा अंक समाप्त होता है । इस अंक में कथानक तेज गति से चलता है । इसमें राजकाज, युद्ध आदि की चर्चा होने के कारण कथानक में रोचकता है ।

तीसरा अंक भारतवर्ष के चोलराज के राजकीय विश्रामगृह में मध्याह्न पूर्व इन्दिरा और पुण्ड़रीक के अग्निचूर्ण (बारूद) पर चले वार्तालाप से शुरू होता है । पुण्ड़रीक अग्निचूर्ण बनाना जानते थे । उन्होंने एक समय गलती सेएक चम्पावासी के समक्ष अग्निचूर्ण बनाने के रहस्य को खोल दिया था । जिसके कारण चम्पा युद्ध में चम्पावासी विजयी हुए । इसी दृश्य में इधर काम्बोज में यशोवर्मा के चचेरे भाई कृष्णवर्मा ने सेनापति श्रीदेव तथा उनके अनुयायियों को कैद करने की बात का पता इन्दिरा और पुण्ड़रीक के संवाद से चलता है । कृष्णवर्मा ने अपने पितृव्य को भी जेल में डाल दिया और राज्य का शासन अपने हाथ ले लिया । इस तरह काम्बोज का शासन भी यशोवर्मा की हाथ से चला जाता है । इन्दिरा और पुण्ड़रीक यशोवर्मा की मदद करने उनकी खोज में निकल पड़ते हैं ।

दूसरे दृश्य में यशोवर्मा और जनार्दन मिल चुके हैं । उनके साथ मकरंद भी है । महासमुद्र में वे बड़े जहाज पर सवार हैं । वे अग्निचुर्ण का रहस्य जानने हेतु भारतवर्ष जा रहे थे मगर उनका जहाज राह भटक जाता है । अतः उन्हें बहुत कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा । तभी उन्हें एक द्वीप दिखाई पड़ता है वे उस ओर चल पड़ते हैं । तीसरे दृश्य में आशाद्वीप

के शिवमंदिर में सूर्योदय पूर्व राजकुमारी रेवा सखियों सहित पूजा करने आयी है । वह एक बहुत अच्छा गीत गाती है । वह सखियों को गुरूदेव ने बताया हुआ रहस्य और उनकी चीर प्रतिक्षा की बात बताती है । तभी उन्हें समुंदर में विशालकाय जहाज दिखाई पड़ता है । राजकुमारी रेवा युवराज यशोवर्मा का भारी स्वागत करती है । अग्निचूर्ण के गोले फेंककर उनका धूमधाम से यथोचित स्वागत करती है ।

चतुर्थ दृश्य में आशाद्वीप के कुछ नागरिक नगरभवन में राजकुमार यशोवर्मा और रेवा के बारे में चिंतित हैं । राजकुमार यशोवर्मा आशाद्वीप के नगर भवन में प्रवेश करते हैं तब देखते हैं कि नागरिक शतरंज खेलने में मशगुल हैं । कुछ नागरिक अपनी महारानी को किसी विदेशी युवक को इतनी महत्ता दे रही हैं जितनी नहीं देनी चाहिए " आदि वार्तालाप कर रहे हैं । वे आशाद्वीप की प्रतिष्ठा पर कलंक न लगने देने का निश्चय कर महारानी से मिलने का इरादा स्पष्ट करते हैं पाँचवे दृश्य में आशाद्वीप का राजकीय उद्यान स्थित है । रेवा और युवराज यशोवर्मा उद्यान में बैठे हैं । रेवा अपने सपनों के राजकुमार यशोवर्मा पर अपना समस्त स्नेह उँड़ेल देती है । वह उनके साथ शादी करना चाहती है ,मगर जनता के मन के आक्रोश को वह तुरंत जान लेती है । वह अपनी प्रजा को शोकातुर या दु:खी नहीं देख पाती अतः अपने प्यार का इकरार करने से पहले उसका परित्याग करने का निश्चय करती है । स्वयं उसी के शब्दों में – " मैं रानी हूँ , नागरिकों की माँ हूँ, उनकी माता बनकर रहूँगी ।उनके लिए मैं अपने व्यक्तिगत स्वार्थ का बलिदान कर दूँगी । तुम जाओ राजकुमार । मेरे हृदय को समझे बिना तुम स्वदेश को वापस लौट जाओ।"[1] लोग यशोवर्मा को लेकर अपने मन में क्षोभ रखते हैं पर महारानी पर उनका पूर्ण विश्वास है । अंत में रेवा यशोवर्मा को अग्निचूर्ण और राजभाण्डार से सामग्री देकर अपने देश लौटने को कहती है । यहाँ पर राजकुमारी रेवा की त्याग–भावना परिलक्षित होती है । प्रस्तुत दृश्य में नाटककार रूढ़ि–परम्परा पर ज्यादा कटाक्ष डालते हैं । यहीं तीसरा अंक समाप्त होता है ।

चतुर्थ अंक के प्रथम दृश्य में आशाद्वीप के राजकीय बन्दरगाह में यशोवर्मा का जहाज वापसी के लिए तैयार है । रेवा से विदा लेकर यशोवर्मा अपने देश की ओर प्रस्थान करते हैं ।मगर जाने से पहले रेवा से वादा करते हैं कि मैं पुनः एक बार आशाद्वीप आवश्य वापस आऊँगा । तभी

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 110 ।

राजकुमारी रेवा अपने प्रेम का इजहार करते हुए राजकुमार यशोवर्मा से कहती है – " मैं पुनः उत्सुकता से तुम्हारे आने की राह देखूँगी । आजीवन मैं तुम्हारी राह देखूँगी ।"[1]

दूसरे दृश्य में काम्बोज की राजधानी अंगकोरथोम में कृष्णवर्मा अपने विश्राम गृह में सोया हुआ है । इधर यशोवर्मा काम्बोज पहुँचता है जनता उसका जोशपूर्ण स्वागत करती है । लोगों द्वारा कृष्णवर्मा के पिता, श्रीदेव और अनुयायियों को कारागार से मुक्ति दिलाकर कारागार को आग लगाई जाती है । कृष्णवर्मा का सपना टूट जाता है । वह देखता है कि जनता यशोवर्मा का जयजयकार कर रही है । वह हैरान हो जाता है तथा कह उठता है " यह क्या । यशोवर्मा वापस लौट आया । इतना अचानक और दो ही घड़ी में सूपंर्ण अंगकोरथोम उसका अनुयायी बन गया यह सब स्वप्न है या सत्य ।"[2] कृष्णवर्मा के पिताजी उसे जान से मार डालते है । यहाँ पर सत्य की विजय की ओर संकेत किया है ।

तृतीय दृश्य में चम्पा प्रदेश में स्थित अमरावती के बाहर यशोवर्मा का सैन्य शिविर है । यशोवर्मा, श्रीदेव और जनार्दन चम्पा विजय हेतु वार्तालाप कर रहे हैं । विजय निश्चित ही है क्योंकि अब उनके पास अग्निचूर्ण है । वे रेवा के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हैं । चम्पा के इस भयानक युद्ध में यशोवर्मा अपने सखा तथा सेनापति श्रीदेव को खो देते हैं । उनके बलिदान पर संतप्त यशावर्मा चम्पाधिपति का देहान्त कर देते हैं ।

चतुर्थ दृश्य में कुमारीद्वीप के बंदरगाह के प्राचीन प्रासादों में मध्यान्हपूर्व समय में ऋषि पुण्ड़रीक तथा इन्दिरा हिंदू शैली पर बने महलों को देख रहे हैं । यहाँ उनकी भेंट मकरन्द से होती है । मकरन्द उन्हें युवराज यशोवर्मा के चम्पाविजय का समाचार सुनाता है । इस दृश्य में शिल्पनिर्माण कला का जिक्र आया है । पाँचवें दृश्य में काम्बोज की राजधानी अंगकोरथोम के राजमहल में प्रातःकालीन समय में सम्राट यशोवर्मा का राज्याभिषेक हो रहा है । यहाँ मंगलगीत गाए जाते हैं । राज्याभिषेक के सुअवसरपर यशोवर्मा को सेनापति श्रीदेव , ऋषि पुण्ड़रीक , मकरन्द और राजकुमारी रेवा की अनुपस्थिति सताती है । ऋषि पुण्ड़रीक और इन्दिरा काम्बोज पहुँच जाते है । यशोवर्मा उनका स्वागत करता है । ऋषि पुण्ड़रीक यशोवर्मा से इन्दिरा का परिचय करा देते है । यहाँ चुतर्थ अंक समाप्त होता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ – 117 ।

2 वही, पृष्ठ – 121 ।

पाँचवें अंक के प्रथम दृश्य में नाटककार नाटक को फिर आशाद्वीप की ओर ले आते हैं । रेवा की मानसिकता का रेखांकन बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है । स्वर्ग जैसे द्वीप उसे कारागार लगता है । जनता भी अपनी भूल पर पश्चाताप प्रकट करती है । संदीप शिव मन्दिर में अकेला रह जाता है । उसे तो अपनी रोजमर्रा की जिंदगी के कारण कोई फर्क नहीं पड़ता । रेवा यशोवर्मा की प्रतीक्षा करती है लेकिन प्रतीक्षा की कोई सीमा नहीं होती । संदीप जब यशोवर्मा को ले आने की बात करता है तब रेवा कहती है " प्रतीक्षा की भी कोई अवधि होती है ,सन्दीप । मैंने कहा था कि मैं प्रतीक्षा करूँगी मैं आजीवन प्रतीक्षा करूँगी ।"[1] यहाँ पर रेवा की प्रतीक्षा ,प्रतीक्षा ही रह जाती है ।

दृवितीय दृश्य में काम्बोज में सम्राट यशोवर्मा का राजमहल है । सम्राट यशोवर्मा राजकुमारी रेवा का जिक्र करते हैं । तभी ऋषि पुण्ड़रीक साम्राज्य के लिए सामाज्ञी की आवश्यकता है इस बात से वाकिफ कराते हैं । वे यशोवर्मा के सामने चोलवंश की कन्या इन्दिरा का प्रस्ताव रखते हैं । यशोवर्मा इसका स्वीकार करते हैं । भाई परान्तिक की अनुमति पर यशोवर्मा इन्दिरा को अपने साम्राज्य की साम्राज्ञी बनाने का निश्चय करते हैं । कलाप्रेमी यशोवर्मा काम्बोज अशाद्वीप जैसे विशाल एवं सुन्दर शिवमन्दिर की स्थापना करते हैं ।यह मन्दिर शिल्प का एक उत्कृष्ट नमूना है जिसका निर्माता भारतवर्ष का महाशिल्पी गोविंद है ।

तृतीय दृश्य में भारतवर्ष के नगर मदुरा में चोलराज पुत्र परान्तिक चोल राजभवन में मध्याह्नोत्तर समय में सिंहासन पर बैठे है । मन्त्री उन्हें काम्बोज केदूत की खबर देता है । दूत युवराज परान्तिक को निमंत्रण पत्र देता है । युवराज निमंत्रण स्वीकार करते है । युवराज परान्तिक ने अपने चोलराज्य को एक विशाल साम्राज्य के रूप में परिवर्तित किया है । प्रस्तुत दृश्य में भाई–बहन के स्नेहबंध का दर्शाया है ।

चतुर्थ दृश्य में सायंकालीन समय से जलमग्न आशाद्वीप का आकाश से दिखाई देनेवाला दृश्य है । आशाद्वीप में तूफानी महाप्रलय हो जाता है ।तूफान ,भूकंप के कारण स्वर्ग समान आशाद्वीप खंड़हर बन जाता है । जहाँ स्वर्ग दिखाई देता था वह आशाद्वीप कुड़ा–करकट दिखाई देता है । आशाद्वीप के नागरिक ,महारानी रेवा हँसते–हँसते मृत्यु का आमंत्रण स्वीकार करते हैं पाँचवे दृश्य में भग्नावशेष आशाद्वीप में शिवमन्दिर की पहाड़ी के निकट के समुद्र में प्रभात समय

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 121 ।

में विशालकाय जहाज पर सम्राट यशोवर्मा , सामाज्ञी इन्दिरा, राजगुरू पुण्ड़रीक और प्रधानमंत्री जनार्दन खड़े हैं । यशोवर्मा , रेवा से दिए वचन के अनुसार उन्हें मिलने चले आए हैं ।पर वे देखते हैं कि आशाद्वीप भग्न अवशेष में शांत पड़ा हुआ है । स्वर्ग के खंड़हर को देखकर यशोवर्मा की सब आशा–आकांक्षा लुप्त हो जाती है । वहाँ रेवा को न पाकर वे दु:खित हो जाते हैं । चरमसीमा के परमोच्च बिंदु पर ही नाटक समाप्त होता है । प्रस्तुत नाटक का अंत बड़ा ही दुखपूर्ण , हृदयद्रावक एवं करूण सिद्‌ध होता है । इस प्रकार अत्यंत करूण और विशादपूर्ण वातावरण में नाटक समाप्त होता है ।

" रेवा " के कथाशिल्प का मूल्यांकन

" रेवा " चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का दूसरा नाटक है । विवेच्य नाटक में भारतीय " सभ्यता और संस्कृति का विस्तार रेखांकित किया है । राष्ट्रीय भावना निर्माण–हेतु, सांस्कृतिक आदान–प्रदान तथा सभ्यता का प्रचार–प्रसार बहुत–ही महत्त्वपूर्ण है " यही बात प्रस्तुत नाटक में चित्रित करने का सफल प्रयास नाटककार ने किया है । नाटक के रचनातंत्र के आधार पर यदि मूल्यांकन किया जाय तो " रेवा " नाटक खरा नहीं उतरता । कारण यह है कि इसमें जो अंक विभाजन तथा दृश्य विभाजन किए गए हैं वे असंगत से लगते हैं ।

प्रस्तुत नाटक में पाँच अंक विद्यमान हैं और क्रमानुसार हर एक अंक में तीन,चार, पाँच, पाँच और पाँच दृश्य प्रस्थापित हैं । कहीं–कहीं स्थानों पर दृश्य के अंतर्गत दृश्यान्तर भी मिलते हैं । प्रस्तुत नाटक लेखक ने रंगमंच के लिए नहीं लिखा था । यह बात स्पष्ट करते हुए स्वयं नाटककार ने " न्याय कीं रात " नाटक की भूमिका में लिखा है जो ऊपर उद्‌धरण के रूप में "अशोक "के कथाशिल्पका मूल्यांकन करते समय दिया ही है ।

"रेवा " में अनेक मान्यताओं , परम्पराओं एवं समस्याओं का उद्‌घाटन किया है । साथ ही साथ इन्सान की मानसिकता तथा उसके अंतर्मन का चित्रण किया है । विवेच्य नाटक में जो अनेकविद्य समस्याएँ अंकित हैं वे इस प्रकार हैं – युद्‌ध का विरोध करना (युद्‌ध एक समस्या) इन समस्याओं को लिखने से पहले मैं यह कहना चाहूँगा कि इन समस्याओं का उद्‌घाटन करना ही

लेखक का मुख्य उद्‌देश्य रहा है ।अतः साम्राज्य विस्तार ,जाति–पाँति ,राजनीतिक समस्याएँ संस्कृति की प्रतिष्ठापना ,नैतिकता का अवमूल्यन ,भूख समस्या ,बाप-बेटे के बीच का टकराव ,भाग्यवाद आदि समस्याओं को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है । इसके साथ ही भारत में भावात्मक एकता का प्रचार–प्रसार एवं कलागत सांस्कृतिक विस्तार । अंत में नाटककार हर एक व्यक्ति के मन में "विश्वकुटुम्बकम" की भावना को ताजा रखने का संदेशा देते हैं । विवेच्य नाटक (पाठ–नाटक) कथाशिल्प की दृष्टि से सफल बन पड़ा है ।

5.1.3 "न्याय की रात"

"न्याय की रात " चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी का प्रकाशन की दृष्टि से चतुर्थ और अंतिम नाटक है जिसका प्रकाशन सन 1959 में हुआ ।यह एक राजनीतिक नाटक है । प्रस्तुत नाटक का पूरा कथानक वर्तमानकालीन शासनव्यवस्था , राजनीति और सामाजिक स्तर पर घूमेरी लगता है । इसमें समाज और शासनव्यवस्था में फैले भ्रष्टाचार , रिश्वतखोरी,भाई–भतीजावाद का लेखा–जोखा विद्यमानहै । राजनीति में भ्रष्टाचार, देश के दुश्मन,स्वार्थी ,अवसरवादी नेता और भ्रष्ट प्रशासकीय अधिकारियों की पोल प्रस्तुत नाटक में खोलकर उन पर कठोर प्रहार किया है । प्रस्तुत नाटक तीन अंकों में विभाजित है । प्रत्येक अंक आरंभ से अंत तक चलता है । उसमें दृश्यपरिवर्तन नहीं होता

प्रथम अंक का स्थान हेमंतकुमार की बैठक है । हेमंतकुमार पाखण्डी व्यक्ति है । आरंभ से अंत तक वह साजिश ही साजिश करता है । वह प्रचलित मानव कमजोरियों से अधिकतम लाभ उठानेवाला एक चलता–पुर्जा व्यक्ति है । हेमंतकुमार की बैठक को देखकर ऐसा लगता है कि वह किसी कलेक्टर की बैठक है। नाटककार ने उसकी बैठक का सही चित्रांकन किया है । उसका उद्‌देश्य गैरकानूनी काम करके अन्याय और अत्याचार से कमाई दौलत का प्रदर्शनतथा हेमंत के भ्रष्टाचार को ज्ञात कराना है।उसकी बैठक पाश्चात्य संस्कृति के अनुसार सजी हुई है । नाटक के प्रारंभ में मंचसज्जा का निर्देशन करते हुए नाटककार लिखते हैं " बैठक पाश्चात्य ढंग से सजी है और दो हिस्सों में बटी–सी दिखाई देती है ।यही बैठक हेमंतकुमार के दफ्तर का भी काम देती है । दाहिनी ओर एक बड़ी मेज रखी है, जिस पर फाइलें ,रैक आदि ठीक ढंग से सजाए गए है । इस मेज के किनारे दीवार की ओर पीठ किए घूमनेवाली एक सुंदर कुर्सी पर हेमंत बैठा है ।"[1] हेमंत की बैठक में मेज, छोटी टेबल , सोफा , टेलिफोन आदि वस्तुएँ दिखाई देती है । इस प्रकार के निर्देशन से स्पष्ट है कि प्रस्तुत नाटक आधुनिकता का बोध कराता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात, पृष्ठ – 25 ।

हेमंत नाटक का प्रमुख पात्र है । अतः पूरा कथानक उसके इर्द-गिर्द मँड़राता है । हेमंत एक सुशिक्षित तिकड़बाज बिजनैसमन है ।वह अपने जीवन में अब तक दुनियादारी का ही धंधा करता आया है । वह पाखण्ड़ी समाजसेवक है । ईमानदारी के जीवन में अविश्वास रखनेवाला हेमंत बेईमान ,पाखण्ड़ी और जालसाज लोगों का प्रतिनिधित्व करता है । अपने हो या पराए, लोगों को ठगाना ,उनपर रोब जमाना उसका धंधा है । इस काम में उसे उसका निजी सहायक मुन्शी देवराज साथ देता है । वह कितना पहुँचा हुआ व्यक्ति है यह दिखाने के लिए बहनोई राजीव और बहन उमा के सामने भारी व्यस्तता और समाज सेवा का ढोंग रचता है । पकड़े जाने पर पूरी दुनिया को एक नाटक के रूप में मानता है । किसी अफसर, व्यापारी लोगों पर रोब जमाकर अपना काम निकालने में वह माहिर है।उसकी कई फर्मे हैं, कितनी ही कंपनियों का वह डायरेक्टर है । इन सारी कंपनियों में गैरकानूनी काम चलता है । उसकी एक तम्बाकु कंपनी शुरू से ही पेचिदापन और भ्रष्टाचार के घेरे में अटकी हुई है । इससे लेकर काफी बवंडर मचता है अतः इस कंपनी का मामला जाँच कमीशन ने ले लिया है । तो हेमंत बहनोई राजीव की मदद लेना चाहता है किन्तु ईमानदार राजीव उसकी कोई मदद नहीं करता ।

हेमंत समाज सेवक होने के कारण उसके पास अनेक व्यक्ति अपने काम लेकर आते हैं । एक दिन कमला नाम की शरणार्थी लड़की उसके पास नौकरी हेतु आ जाती है तो हेमंत उसे सदानंद नामक अफसर के सरकारी दप्तर में नौकरी देता है । असल में यहाँ भी हेमंत का स्वार्थ ही है । हेमंत ने सदानंद जैसे अनेक ऊँचे सरकारी अफसरों को अपने जाल में फाँस लिया है । इस अंक में हेमंत के अनेक बेईमान कामों की जानकारी मिलती है । उसके साथी सेठ रामकिशोर,सदानंद जैसे अनेक लोगों की मदद से वह काफी भ्रष्टाचार करता है फिर भी वह समाजसेवक का बुरखा पहन कर शोहरत और इज्जत की जिंदगी जीता है । अनेक गैर काम करके कानून और समाज से बचने का अच्छा तरीका हेमंत के पास है ।

द्वितीय अंक में स्थान सदानंद का सरकारी दप्तर है । वह एक जिम्मेदार सरकारी अफसर है । प्रथम अंक समाप्त होने के बाद द्वितीय अंक के आरंभ में तीन महिने का कालान्तर दिखाया गया है । सदांनद भी बेईमान सरकारी अधिकारी है । उसके दप्तर में हेमंत ने भेजी हुई शरणार्थी लड़की कमला उसकी निजी सहायक के रूप में काम करती है । सदानंद कमला पर डोरे डालता है । अफसर लोगों की वासनामयी दृष्टिकोण को इस अंक में प्रदर्शित किया है । हेमंत ने भी असल में कमला को रिश्वत के रूप में ही सदानंद के पास भेजा था ।

एक दिन जुगलकिशोर नामक एक युवक युनियन पब्लिक सर्विस कमीशनद्वारा चुने जाने के बाद परचेस आफिसर के रूप में उसकी नियुक्ति सदानंद के दप्तर में हो जाती है । पर सदानंद उसे नियुक्त कर (हाजिर कर) लेना नहीं चाहता । क्योंकि सदानंद उसकी जगह उसके पहचानवाले मित्र विजय राधव को देना चाहता था । नाटककार ने यहाँ दप्तर के अफसर लोगों की कामचोर प्रवृत्ति तथा दप्तर विलंब का सही चित्रण किया है । हार कर आखिर जुगलकिशोर पिताजी के परममित्र श्री व्यंकटाचारी जी से जा मिलता है जो बड़े व्यक्ति है । तब कही वह अपने पद पर उपस्थित हो सका । जुगलकिशोर जैसे सुयोग्य और लायक व्यक्ति को नकारकर नालायक व्यक्ति को भाई–भतीजावाद की प्रवृत्ति के कारण लायक बना दिया है जिससे समाज और देश की हानि हो रही है । यहाँ पर वर्तमान स्थिति में चल रहे भाई–भतीजावाद का पर्दाफाश किया है ।

जुगलकिशोर सदानंद के दप्तर में परचेस अफसर के रूप में नियुक्त हो जाता है । कमला की उनसे मुलाकात हो जाती है । वे बचपन के सहपाठी हैं कई दिनों के अंतराल के बाद उनकी मुलाकात होती है । कमला जुगलकिशोर को बहुत पसंद करती है । वे दोनों एक दूसरे को स्नेह देते हैं । जुगलकिशोर कमला से कहता है कि आज का समाज गंदगी से भरा हुआ है , उसका सामना करना होगा । उनके शब्दों में " अब किसी भी जगह वह पुरानी बात नहीं रही है ।सब जगह खुशामद, पक्षपात और तिकड़मबाजी का दौरदौरा है । योग्यों की कोई कदर नहीं करता , तिकड़मबाज अत्यंत अयोग्य होते हुए भी तरक्की पाते चले जाते है ।"[1] नाटककार मूल्यों के परिवर्तन के प्रति गहरी संवेदना प्रकट करते हैं । इस वार्तालाप से वर्तमान समाज का बेनकाब नक्शा नाटककार पाठक के सामने पेश करने में सफल हुए हैं ।

सदानंद कमला पर डोरे डालता है पर कमला शुरू से ही उस पर गहरी श्रद्धा रखती है । सदानंद उसे अकेले में अपनेकमरे में बुलाता है और चिट्ठी टाइप करनेको कहता है । वह चिट्ठी टाइप कर रही होती है तो सदानंद उसके पीछे आ खड़ा होता है । बढ़ने की कोशिश करता है, पर झिझकता भी है,क्योंकि कमला उसे पवित्र भाव से देखती है ।उसकी पाप भावना को समझ तक नहीं पाती । सदानंद को वह किसी भी हरकत से रोकती नहीं । वह उन्हें पिता–समान मानती है,उन पर विश्वास रखती है।इसी विश्वास और पवित्र भावना के कारण सदानंद का हृदयपरिवर्तन हो जाता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात, पृष्ठ – 81–82 ।

इधर हेमंत की तम्बाकु कंपनीवाला केस बहुत पेचीदा बन जाता है । वह इससे सुरक्षित बच निकलने हेतु एक साजिश रचता है। सदानंद की आड़ में वह कमला को फँसाना चाहता है । वह उसे उस जालसाज कंपनी का सेक्रेटरी बहुत पहले से (नौ महिने पूर्व से) बना देने और इसके बदौलत उसे पिछला पूरा वेतन भी देने को तैयार है । किंतु सदानंद इस बात के लिए राजी नहीं होता । वह कमला को फँसाना नहीं चाहता । मगर हेमंत उसे जेल का डर दिखाकर धमकाता है तो मजबूरन सदानंद इस जालसाजी के लिए तैयार हो जाता है । उस योजना के मुताबिक कमला को नौ महीने की तारीख डालकर तम्बाकु कंपनी की तरफ से सेक्रेटरीशिप का नियुक्ति पत्र दिया जाता है जिसके अनुसार वह उक्त तारीख से 1000।- रूपए मासिक वेतन पर कंपनी की सेक्रेटरी नियत हो जाती है ।उसी तरह तीन महीने पहले की तारीख डालकर कमला का कंपनी से त्यागपत्र भी लिया जाता है ।इसकी बदौलत उसे छः महीने की तनख्वाह 6000- रूपए और 4000- रूपए उधार कार खरीदने के लिए देना चाहते हैं पर कमला उस रूपयों को छूना भी नहीं चाहती मगर सदानंद के कहने से मजबूरन उस रूपयों को लेकर रिफ्युजी स्कुल के बच्चों को दान स्वरूप दे देती है । इस घटना से तो सदानंद के मन में पूर्ण परिवर्तन आ जाता है । कमला के संसर्ग सेउसका हृदयपरिवर्तन हो जाता है । इसी समय रेडियो पर पं.नेहरू जी का भाषण सुनाई देता है जो भारतीय अर्थ व्यवस्था संबंधी है । हेमंत उसे बन्द कर देता है। यहाँ पर द्वितीय अंक समाप्त हो जाता है ।

दो माह के अंतराल के बाद तृतीय अंक प्रस्थापित किया है । हेमंत की बैठक है तथा तुफानी और बरसाती रात है । पूरा अंक एक अंधेरी रात और बहुत निर्णायक रात का है । न्याय और अन्याय के खिलाफ संघर्ष में हार और जित की लड़ाई है । नाटककार ने भयंकर काली रात का समय चुनकर अनुकूल वातावरण की निर्मिति की है । हेमंत अपने काले साम्राज्य का जिम्मेदार कमला नामक भोली-भाली लड़की के उपर डालने का भयंकर षड्यंत्र रचता है। उसने लगाए जाल में बाजी चित पड़ेगी या पट इस बात पर वह काफी चिंतित दिखाई देता है । वह बिगड़ी हुई बाजी जितने की कोशिश में लगा है वह अपने को बहुत होशियार समझता है मगर वह अपने ही बिछाए जाल में फँसता चला जा रहा है ।उसका बहनोई राजीव उसकी सब काली करतूतें जानता है फिर भी अनजान बनकर रह जाता है ।राजीव पुलिस विभाग का खुफिया अधिकारी है इस बात की आशंका हेमंत को है मगर खबर नहीं है । पुलिस को हेमंत के खिलाफ इतने सारे प्रमाण मिल चूके है जिसके अनुसार उसे सुबह होने से पूर्व ही गिरप्तार कर सकते हैं । इससे भी बच

निकालने हेतु हेमंत भयंकर षड़यंत्र रचता है । यहाँ कथानक चरमविकास पर है ।

हेमंत बहनोई राजीव को फोन कर जरूरी काम के लिए घर पर बुलाता है । राजीव व्यस्त होने के कारण हेमंत से मिलने बहनउमा आती है और राजीव आते ही होंगे उनसे कुछ भी न छुपाने की बात कहती है । हेमंत उस वक्त जीवन की व्याख्या करते हुए कहता है " मनुष्य के जीवन की सबसे बड़ी ट्रेजेडी यही है कि वह खुद अपना सबसे बड़ा दुश्मन है । अपने बनाए चक्रव्युह में वह इतना अधिक फँस जाता है कि समझते बुझते भी उससे निकल नहीं पाता ।"[1] नाटककार यहाँ जीवन के बहुत बड़े तत्थ्य को स्पष्ट करना चाहते हैं । हेमंत फिर भी झूठ कहता है कि उमा तुम चिंता मत करो मेरा काम कभी कानून के बाहर का नहीं होता । उमा के चले जाते ही राजीव आ जाते हैं । उन्हें भी हेमंत अपनी सफाई पेश करने की कोशिश करता है । बात को घुमा कर कहता है । राजीव भी अनजान बने रहते हैं । इस अंक में नाटक्कार ने वार्तालाप के जरिए बातों को घुमा कर कह देने की कोशिश की है । राजीव हेमंत को डाट फटकारता है तब हेमंत अपनी असलियत बता देता है । स्वयं हेमंत के शब्दों में " एक दिन आपने मुझसे पुछा था कि मेरा पेशा क्या है ? आज मैं उसका जवाब देता हूँ । मेरा पेशा है बेईमान व्यक्तियों के लिए परमिटों का इंतजाम करना, बेईमान और लालची व्यवसायपतियों को बड़े-बड़े ठेके दिलवाना और यह सब मैं कर पाता हूँ ऊँचे ओहदों पर विद्यमान कुछ बेईमान और विश्वासघाती सरकारी अफसरों की सहायता से ।"[2] फिर भी राजीव उसे कहता है यह आप क्या कह रहे हैं ? आप तो बड़े देशभक्त, महान समाजसेवक हैं । तो वह राजीव से कहता है कि मैं तो मजाक कर रहा था । हेमंत सोचता है कि राजीव सचमुच अभी तक उसे समाजसेवक ही समझता है अतः फिर वह समाज सेवक का नकाब ओढ़कर अपनी सफाई पेश कर सदानंद और कमला को अपनी जगह दोषी ठहराने की कोशिश करता है । वह उनके विरूद्ध झूठे सबूत पेश करता है और वह रजिष्टर भी देने का वचन देता है जिसमें काफी बेईमान व्यक्तियों के नाम हैं । राजीव उसे सोच समझकर कदम उठाने को कहकर फटकारते हुए कहता है " आप लोगों की यही मेहरबानी होगी कि तरह-तरह के अवैध और गुप-छिप कर किए गए कामों से देश की उन्नति के मार्ग में बाधाएँ न पहुँचाएँ।"[3]

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात, पृष्ठ - 112 ।

2 वही, पृष्ठ - 114 ।

3 वही, पृष्ठ - 119 ।

राजीव उसे आज की यह तूफानी बरसाती अंधेरी रात आपके जीवन का एक अलग मोड़ सिद्ध होगी कहकर चला जाता है । यहाँ पर कथानक काफी आकर्षक एवं रोचक बन पड़ा है ।

हेमंत की राजीव के पुलिस विभाग में होने की आशंका सच निकलती है । वह अब और चाल चलता है । वह सदानंद को फोन कर रात में ही अपने घर बुलाता हे और झूठ बताता है कि पुलिस उन्हें (सदानंद को) कल सुबह गिरफ्तार करनेवाली है, इसलिए सारी बेईमानियाँ कमला पर थोपी जाए । सदानंद इसके लिए तैयार नहीं होता तो उसे डराता, धमकाता है । सदानंद घबराकर हेमंत का लोहा मान जाता है और मजबूरन कमला के दोषारोप पत्र पर साईन कर उसे जालबाज नारी सिद्ध करता है । फिर हेमंत कमला को फोन करता है और सदानंद संकट में है कहकर अपने घर बुलाता है । कमला के आ जाने पर उसकी हत्या कर आत्महत्या साबित करनेकी कोशिश करता है । पर इधर राजीव हेमंत के सारे फोन कई महीनों से टेप कर रहा था इसी कारण उसकी सारी साजिश उसे मालूम पड़ती है । अतः राजीव और जुगलकिशोर सही वक्त पर वहाँ पहुँच जाते हैं । राजीव हेमंत को शरण आनेके लिए कहता है पर स्वयं को नैपोलियन, हिटलर का शिष्य माननेवाला हेमंत शरण आने के बजाय पिस्तौल चलाकर आत्महत्या करता है । यहीं कथानक समाप्त होता है । हेमंत की मौत से अंधःकार का साम्राज्य नष्ट होता है और कमला के लिए यह भयंकर काली रात न्याय की रात साबित होती है जिसका फल राजीव को प्राप्त हो जाता है ।

" न्याय की रात " के कथाशिल्प का मूल्यांकन

"न्याय की रात " तीन अंकों में विभाजित नाटक है । इसमें दृश्य विभाजन नहीं है । नाटक देखते समय दर्शक उसमें काफी रूचि लेता है । नाटक के कथानक में प्रवाहमयता एवं रोचकता प्रतित होती है । " न्याय की रात " वर्तमान परिस्थिति में स्थित भ्रष्टाचार, राजकीय उथल-पुथल , रिश्वतखोरी आदि का प्रामाणिक दस्तावेज है । यह रंगमंच के लिए लिखा गया सफल नाटक है । इस नाटक के संबंध में नाटककार स्वयं लिखते हैं " यह नाटक रंगमंच के लिए लिखा गया है । रंगमंच संबंधी उतने ही निर्देश इस नाटक में दिए गए हैं ,जितने आवश्यक थे और जिनसे नाटक की पठनीयता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता ।"[1]

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ - 19 ।

प्रस्तुत नाटक में अनेक समस्याओं का उद्घाटन किया है । नीतिमूल्यों में आई गिरावट, मजदूर समस्या, यातायात की समस्या, शोषण, बेकारी, शरणार्थी समस्या, नारी समस्या, भाई–भतीजावाद, राजनीतिक अवस्था, नेता तथा सरकारी अफसरों पर व्यंग्य , मानसिक कमजोरी आदि बातों का चित्रण यहाँ मिलता है । " न्याय की रात " का प्रमुख उद्देश्य देश में गहरी भावात्मक एकता का प्रचार–प्रसार एवं भ्रष्टाचार मुक्त शासन व्यवस्था तथा आदर्श की प्रतिष्ठापना रहा है । कथाशिल्प की दृष्टि से यह नाटक पूरी तरहसे सफल नाटक है ।

5.2 चरित्र–शिल्प

नाटक में पात्र का स्थान निर्विवाद है। प्रत्येक पात्र का अपना एक निश्चित व्यक्तित्व होता है । इसे ही हम चरित्र कह सकते हैं । चरित्रके अभाव में चरित्र–चित्रण की कल्पना असंभव है । डॉ. सूरजकान्त शर्मा ने भी नाटक में पात्र और चरित्रसृष्टि का महत्त्व बिना किसी शर्त के स्वीकार किया है । उनका कहना है कि " न तो चरित्र के अभाव में चरित्र–चित्रण की कल्पना की जा सकती है और न ही चरित्र–चित्रण के अभाव में चरित्र की सर्जना अतः चरित्र तथा चरित्र–चित्रण की कल्पना नाटक के लिए अनुस्युत है ।"[1] अर्थात नाटक के लिए चरित्र की अत्यंत आवश्यकता है। नाटककार की चरित्रनिर्मिति की शैली चरित्र–शिल्प कहलाती है । चरित्र–चित्रण में पात्र के जीवन व्यवहार, उसकी नीति–अनीति आदि उनके व्यक्तित्व संबंधी बातों के आधार पर श्रेष्ठ , कनिष्ठ और आदर्श चरित्र की निर्मिति हो जाती है । इसमें पात्र के जीवन का नैतिक स्तर, वैयक्तिक महत्त्वाकांक्षा, जीवन के प्रति दृष्टिकोण, उसकी आदतें , उसका बाह्य तथा अंतर्गत व्यक्तित्व , योग्यता, भाषा, वेषभूषा, ज्ञान, कला–कौशल, गुण आदि बातें समाविष्ठ हैं ।

पात्र के शील, स्वभाव, आचार–विचार, आहार–व्यवहार, उनकी संवेदना, स्मृति, निर्णयशक्ति, कल्पना आदि चरित्र–चित्रण में विशेष महत्त्व रखते हैं क्योंकि यहीं पात्र का व्यक्तित्व है जिस पर उसका चरित्र अवलंबित है । चंद्रगुप्त जी के " अशोक " और " रेवा " नाटक में पात्रों की अधिकता है । "अशोक "नाटक के प्रमुख पुरूष और स्त्री पात्रों में अशोक, सुमन, आ. उपगुप्त , चण्डगिरी और शीला है तो गौण पुरूष और स्त्री पात्रों में तिष्य, तिष्यरक्षिता और चित्रा आदि है ।" रेवा " नाटक के मुख्य पुरूष और स्त्री पात्रों में यशोवर्मा , जनार्दन , श्रीदेव तथा रेवा

---

1 विष्णु प्रभाकर – विष्णु प्रभाकर के सम्पूर्ण नाटक खंड–6, पृष्ठ – 13 ।

ये हैं । गौण पुरूष और स्त्री पात्रों में आ. पुण्ड़रीक, संदीप और इन्दिरा आदि हैं ।

"न्याय की रात " नाटक के मुख्य पुरूष और स्त्री पात्रों में हेमंत ,राजीव, सदानंद ,कमला है तो गौण पुरूष और स्त्री पात्रों में जुगलकिशोर , मुंशी देवराज, उमा आदि हैं । चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के प्रथम दो "अशोक "और "रेवा " सांस्कृतिक चेतना से अनुप्राणित ऐतिहासिक नाटक होने कारण उनके पात्र ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के चरित्र को स्पष्ट करते हैं । इसी कारण " अशोक " और " रेवा " के कई पात्र यथा – आ.उपगुप्त , मकरंद, गोविंद तथा इन्दिरा आदि चरित्र भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं । इसी कारण सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति इन पात्रों में सर्वत्र मुखरित हुई है ।

5.2.1 **महत्त्वाकांक्षी चरित्र की सृष्टि**

अपनी प्रतिभा के बल पर विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों में महत्त्वांकांक्षी चरित्रों की मनोहर आकृति पेश की हे । "अशोक " नाटक के अशोक का चरित्रांकन एक महत्त्वाकांक्षी ,स्वार्थी, क्रियाशील एवं निपुण है । दुर्दम्य आत्मविश्वासी तथा नीतिनिपुण अशोक तक्षशिला के विद्रोह पर अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त करता है " तक्षशिला के विद्रोह को तो मैं बच्चों का खिलवाड़ समझता हूँ । दो–एक व्यक्तियों के कान ऐंठ देने से ही यह विद्रोह शांत हो जाएगा ।"[1] महत्त्वांकांक्षी अशोक बड़े कौशल से तक्षशिला की विद्रोही जनता को अपने वश में कर लेता है ।

अशोक महत्त्वाकांक्षी होने के कारण सम्राट बनने की लालसा उसे सताती है । साम्राज्य का उत्तराधिकारी बड़े भैय्या सुमन को वह मानने के लिए तैयार नहीं है । उसके शब्दों में " इस दुनिया में सिर्फ कुछ समय पहले आ जाने के कारण सुमन तो सम्राट बन जाए और मैं राज्यसंचालन की योग्यता में उसकी अपेक्षा कई गुना अधिक निपुण होते हुए भी सारी उम्र उसकी नौकरी बजाऊ यह मुझसे सहन न होगा ।"[2]

विद्यालंकार जी ने अशोक का चरित्र दो हिस्सो में बाँट दिया है । हिंसक और अहिंसक उसका आरंभिक चरित्र एक क्रूर एवं हिंसक सम्राट के रूप में हुआ है तो उत्तरार्ध में वह अहिंसा

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 7 ।

2 वही, पृष्ठ – 43 ।

और लोककल्याण की भावना के संदेशवाहक के रूप में चित्रित है । हिंसा और अहिंसा के चरमबिन्दु पर आन्दोलित होनेवाला चरित्र विद्यालंकार जी ने " अशोक " नाटक में अशोक के रूप में चित्रित किया है। कलिंग युद्ध का भीषण नरसंहार उसकी क्रूरता और हिंसावादिता का उग्र रूप प्रस्तुत करता है । " इस मामूली-सी दया-माया के पीछे मैं इतने दिनों की मेहनत बरबाद नहींकर सकता ।"[1] कहनेवाला अशोक बच्चों , बूढ़ों और स्त्रियें पर भी अनन्यतम अत्याचार कर देता है । इसी हिंसा में एक दिन अहिंसा का जन्म होता है । भाभी शीला की उनके लिए आत्मबलिदान की भावना से उसके हृदय का परिवर्तन हो जाता है । इस परिणति का माध्यम आ. उपगुप्त बनते हैं उपगुप्त बौद्ध धर्म की समस्त मान्यताओं का प्रतीक बनकर अपनी चारित्रिक सहृदयता , कर्तव्यशीलता एवं अहिंसावादिता के बल पर अशोक और शीला को हृदयपरिवर्तन के लिए प्रेरित करते हैं ।

"रेवा " नाटक में यशोवर्मा का चरित्र महत्त्वाकांक्षी , सरल, विनीत, दृढ़ साहसी और पराक्रमी राजकुमार के रूप में पर्याप्त प्रभावशाली ढंग से अंकित हुआ है । महत्त्वाकांक्षी यशोवर्मा साम्राज्यविस्तार की महत्त्वाकांक्षा हृदय में लेकर चलते हैं । इसी कारण उनके हृदय में दिग्विजय की लालसा है । महत्त्वाकांक्षी यशोवर्मा कहते हैं कि " मेरी दृष्टि में राज्य संचालन से भी बढ़कर मेरा कर्तव्य है, राज्य का विस्तार एक साम्राज्य की स्थापना । मैं वहीं काम करूँगा ।"[2] यशोवर्मा के चरित्र की विशिष्टता यह है कि उनके साम्राज्य विस्तार की महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के प्रयत्न में देश-विदेश में भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार और प्रतिष्ठा होती है । नाटककार द्वारा संपूर्ण नाटक में यशोवर्मा का चरित्र भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रतिष्ठापकं के रूप में तथा कलाप्रेमी के रूप में चित्रित है ।

यशोवर्मा की वीरता, विनम्रता, उत्सर्ग भावना एवं प्रेमपूर्ण चारित्र्य से चोलराज की कन्या इन्दिरा अभिभूत होती है । नाटककार ने यशोवर्मा के चरित्र को आदर्शवादी बना दिया है । उसे लोकोत्तर पुरूष, महाविद्वान तथा कवि के रूप में चित्रित किया है । यशोवर्मा के चरित्र का चित्रण पितृव्य और नागरिकों के शब्दों में " पितृव्य – वह कौन नरवीर है, जो बीना शस्त्र लिए भूखे शेर को पराजित कर सकता है ? जिसका तेज विश्वभर के सभी प्राणियों के लिए असह्य है

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 1C4 ।

2 चंदगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 35-36 ।

नागरिक – युवराज यशोवर्मा ।"[1] यशोवर्मा का चरित्र दृढनिश्चयी एवं साहसी राजकुमार के रूप में पूर्ण स्पष्टता एवं प्रखरता से अंकित किया गया है ।

" न्याय की रात " नाटक में हेमंत का चरित्र एक महत्त्वाकांक्षी पाखण्ड़ी समाजसेवक का है । मानव–कमजोरियों से फायदा उठाकर स्वार्थ की पूर्ति करना उसकी महत्त्वाकांक्षा है । नाटककार ने हेमंत के दोहरे व्यक्तित्व का चित्रण किया है । हेमंत तिकड़मबाज बिजनैसमन और समाजसेवक का बुरखा पहना हुआ पाखण्ड़ी समाज–सेवक तथा भ्रष्टाचार का प्रतीक पात्र है । वह भ्रष्टाचार का हिमनग है ।" आज की दुनिया में ईमानदारी का जीवन बिताया ही नही जा सकता " ऐसा कहनेवाला हेमंत बेईमानी की जिंदगी में विश्वास रखता है । वह सब लोगों की कमजोरियों का किसी न किसी रूप में लाभ उठाता ही है । वह खुद बताता है " मैं शक्ति का पुजारी हूँ । यह दुनिया कमजारों के लिए नहीं है । दया, ममता, करूणा इन सब को मैं कमजोरी मानता हूँ । शक्ति की स्थिति प्रमाण और निरन्तरता के लिए मैं हिंसा और अपहरण को अपरिहार्य मानता हूँ ।"[2]

हेमंत चालबाज और स्वार्थपरायण धनिक वर्ग का प्रतिनिधि है । वह ऐसा जबरदस्त चरित्र है जिसका प्रभाव पूरे नाटक में है । ऐशों–आराम की जिंदगी जीनेवाला हेमंत षड़यंत्रकारी है वह काफी बुद्धिमान एवं कूटनितिज्ञ है । उसके सिद्धान्त एवं दृष्टिकोण भी आम चरित्र से अलग किस्म के है । कठिन से कठिन परिस्थिति से भी सुरक्षित बच निकलने में वह माहिर है । वह चाणक्यनीति से चलता है कठिन परिस्थिति में वही चाल उसे बचाएगी ऐसा विश्वास रखता है "विषस्य विषमौषधम् ।" अर्थात जहर का इलाज भी जहर ही है । और " कष्टकेनैव कण्टकम् ।" अर्थात कांटे को कांटे से ही निकाला जाता हे ।"[3] ऐसे सिद्धान्त के अनुसार चलनेवाला पाखण्ड़ी नेता हेमंत " न्याय की रात " का बहुत बड़ा महत्त्वाकांक्षी और जबरदस्त चरित्र है जो कभी हार मानने को तैयार नहीं होता । अंत में खुदकुशी कर देता है । चाणक्य, नैपोलियन तथा हिटलर को आदर्श मानकर चलनेवाला हेमंत एक अत्यंत महत्त्वाकांक्षी चरित्र है ।

5.2.2 आदर्शवादी चरित्र की सृष्टि

चंदगुप्त विद्यालंकार जी के नाटकों में कई आदर्शवादी चरित्रों के पात्र देखने को मिलते हैं जो भारतीय संस्कृति सभ्यता कला, नीतिमूल्य धर्म की प्रतिष्ठापना कर राष्ट्रीय एकात्मता

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा , पृष्ठ– 141।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ– 90 ।

3 वही, पृष्ठ – 107 ।

अखंड़ता एवं राष्ट्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । आदर्श व्यक्ति के चरित्र का अपना एक विशेष गुण है । आदर्शवाद की जरूरत को तथा उसके महत्त्व को स्पष्ट करते हुए डॉ. श्याम शर्मा कहते हैं " आदर्शवादी नायक मानवीय मूल्यों के प्रति अत्यधिक सजग होता है ।ये मानवीय मूल्य ही जो किसी भी समाज और राष्ट्र को भावात्मक एकता में बाँधते है और सामाजिक, राष्ट्रीय प्रगति एवं उन्नति का मार्ग प्रशस्त करते हैं ।[1] विवेच्य नाटकों में भी विद्यालंकार जी इसी उद्देश्य हेतु आदर्शवाद और नैतिकता की प्रतिष्ठापना अपने चरित्रों के जरिए करना चाहते हैं तथा समाज में फैले भ्रष्टाचार का उन्मूलन हो जाए ।

" अशोक " नाटक के सुमन का चरित्र आदर्शवादी है । वह बड़ा ही सहृदयी ,गम्भीर त्यागी , सीधा तथा भतृप्रेमी है । अशोक और सुमन भाई-भाई होकर भी दोनों के चरित्रों में भारी वैषम्य है। सुमन एक ऐसे कर्तव्यशील राजकुमार के रूप में आता है जो राजकीय कर्तव्य को जी की चाह से ऊपर की चीज मानता है । यह उनका विचार तथा आचरण आज के भ्रष्ट, स्वार्थी नेता लोगों के लिए आदर्श की ओर ले लाने के लिए सहायक ही है । विद्यालंकार जी ने सुमन का चरित्र देवदुलर्भ के रूप में चित्रित किया है । महान त्यागी सुमन एक भाई का आदर्श, एक राजा का आदर्श तथा एक बेटे का आदर्श प्रस्थापित करता है । उसे राज्यमोह से अधिक भातृप्रेम होने के कारण अशोक के पाटलिपुत्र पर आक्रमण कर देने से उसे प्रतिकार नहीं करता बल्कि नागरिकों द्वारा प्रतिरोध किए जाने के बावजूद भी पाटलिपुत्र नगर का द्वार खोल देता है । उन्के शब्दों में भाई के प्रति उत्कट प्रेम प्रकट होता है " भाईयों ,आप लोग जब अशोक की मूर्ति का अपमान करते हैं, तो मेरा अपमान करते हैं ।आप लोग मेरी बात मानिए और नगर के द्वार खोल दीजिए।"[2] ऐसे महान चरित्र की प्रतिष्ठापना नाटककारने कर दी है जिससे समाज में आदर्श की भावना निर्माण हो जाए । महत्त्वाकांक्षी सम्राट अशोक अपने भाई सुमन को जेल में डालकर बड़ी साजिश से उसकी हत्या करवा देता है । नाटककार ने दो भाईयों के

---

1 डॉ. श्याम शर्मा – आधुनिक हिंदी नाटकों में नायक , पृष्ठ – 174 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 53 ।

चरित्रों में काफी वैषम्य चित्रित किया है ।युवराज सुमन का चरित्र मानवीय एवं स्वाभाविक है तो अशोक का चरित्र अमानवीय और ह्दयहीन है । अशोक बचपन से ही तेज और स्वार्थी स्वभाव का है ।

"अशोक " नाटक के दूसरे आदर्शवादी नारी चरित्र में शीला का चरित्र बड़ा सशक्त बन पड़ा है । यह मातृप्रेम से वंचित एकांत प्रिय ,सुशील और मृदुल स्वभाव की है । एकान्त में बैठकर वीणा बजाना और गीत गाना उसका शौक है । शीला युवराज सुमन की वाग्दत्ता वधू और आचार्य दीपवर्धन की एकमात्र कन्या है । वह बचपन से ही शांत स्वभाव की है । उसके आचार–विचार सुशील नारी का आदर्श प्रस्थापित करते हैं । वह बहुत भावुक स्वभाव की है ।

उसके और सुमन के विवाह में काफी कठिनाइयाँ आ जाती हैं । फिर भी वह उनका धीरज से मुकाबला करती है किन्तु आखिर तक असफल ही रहती है । युवराज सुमन का विवाह के निश्चित तिथि पर ही धोखे से वध किया जाता है तो वह तड़प उठती है । वह हत्यारे अशोक के खिलाफ प्रतिहिंसा से प्रेरित होकर लड़ना चाहती है मगर आ. उपगुप्त के आदेश और संदेश को मानकर उनके आश्रम में दीन–दु:खियों कीसेवा करने में जुट जाती है । वह सेवाभावी , कर्तव्य की प्रतिमूर्ति है । आ. उपगुप्त के सिद्धान्तों की कार्यरूप में परिणति शीला के चरित्रद्वारा हुई है । उसकी कर्तव्यशील और आत्मबलिदान की भावना ने " अशोक " जैसे पाषाणहृदयी चरित्र का हृदयपरिवर्तन कर दिया है । यह उनके आदर्श का महत्त्वपूर्ण पक्ष है। जब वह अपने पति के घातक, हत्यारे अशोक के बदले में अपनी जान देने को तैयार होती है तब वह कलिंग युद्ध को रोक देना चाहती है। इसी उदात्त विचार से वह अपने प्राण का त्याग करने के लिए तैयार होती है । यही इसका महान आदर्श है । उसका क्षमाशील स्वभाव भी उसके इस कथन से स्पष्ट हो जाता है " अशोक,मेरे देवर, मैंने तुम्हें क्षमा कर दिया । मैंने तुम्हें हृदय से क्षमा कर दिया । आज मैं अपनी परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाऊँगी और तुम्हें मृत्यु के मुँह से बचा लूँगी ।"[1] नाटककार ने उसके आन्तरिक भावों का विश्लेषण बड़ी सजगता से किया है ।

शीला के चरित्र की यह सबसे बड़ी विशेषता है कि हिंसा का पुजारी अशोक अहिंसा में इतना विश्वास करने लगता है कि उसने राज्य में शिकार खेलना भी विनयपूर्वक बन्द कर दिया । सामाज्ञी तिषि के शब्दों में " उन्होंने दूध तक पीना छोड़ दिया है बहिन । कहते हैजब तक मेरे

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक , पृष्ठ – 110 ।

राज्य में एक भी पशु की हत्या होती है, मुझे दूध पीने का अधिकार नहीं ।"[1] अमानवीय अशोक प्राणीमात्र पर भी दया करने लगा । यह हृदयपरिवर्तन शीला के चरित्र की बहुत बड़ी उपलब्धि है । अंत में भी शीला कर्तव्य की पुकार सुनकर सीमाप्रान्त की ओर जनसेवा करने के लिए चली जाती है

" रेवा " नाटक की नायिका राजकुमारी रेवा का चरित्र भी आदर्शवादी है । उनका करूणासिक्त गीतिमय चरित्र सबसे प्रभावी और मनोहर बन पड़ा है ।उनका चारित्र राजकीय कर्तव्य की बलिवेदी पर " प्रेम " के आत्मत्याग के कारण अत्यंत करूणामय बन पड़ा है । उसके जीवन की यह बहुत बड़ी त्रासदी है कि यशोवर्मा को जी जान से चाहते हुए भी उसके साथ विवाह नहीं कर सकती । उसके मन की अंःतर्वेदना को स्वगत कथन द्वारा स्पष्ट कर दिया है । वह यहाँ द्रष्टव्य है " जाओ राजकुमार तुम अपने देश को लौट जाओ । मेरे हृदय में जो तेज ज्वाला धधक रही है,उसका आभास भी तुम जान न पाओ । xxxx स्वयं अपनी व्यक्तिगत इच्छा के लिए मैं उन्हें रूढ़ियों को ठुकराने की सलाह कैसे दूँ । नहीं, मैं सभी कुछ सहन करूँगी । मैं रानी हूँ , नागरिकों की माँ हूँ उनकी माता बनकर रहूँगी । उनके लिए मैं अपने स्वार्थ का बलिदान कर दूँगी तुम जाओ राजकुमार । मेरे हृदय को समझे बीना तुम स्वदेश को वापस लौट जाओ ।"[2] वस्तुतः रेवा का चरित्र उस नारी की विड़म्बना को व्यक्त करता है जो समाज की रूढ़ियों की बलिवेदी पर न्यौछावर होने के लिए मजबूर है ।रेवा का चरित्र दो द्वंद्वो के बीच उभरता है जहाँ एक ओर आशाद्वीप की महारानी का कर्तव्य और दूसरी ओर यशोवर्मा के प्रति अनुराग की भावना । इसी में कर्तव्य को श्रेष्ठ मानकर प्यार का त्याग करने के कारण उसका चरित्र ऊपर उठा है ।बिना त्याग के बड़पन किस को मिल सकता है । त्याग के कारण ही उनका चरित्र आदर्शवादी बना है ।रेवा आजन्म अविवाहित रहकर प्रजा की सेवा करती है ।

" न्याय की रात " के राजीव का चरित्र एक अत्यंत ईमानदार भारतीय नागरिक के रूप में चित्रित है । ईमानदारी ही उसका आदर्श है । राजीव एक अत्यंत होशियार ,सुशिक्षित चरित्र है जो आय.सी.एस. की प्रतियोगिता में पहली ही बार सफल हुआ है । राजीव का चरित्र जानने के लिए काफी कठिनाइयाँ महसूस होती हैं । उसका साला हेमंत भी यह बात मानते हुए कहता है- "राजीव बहुत गहरा आदमी है। पर मैंने भी निश्चय कर लिया है कि उसकी गहरई की थाह पाकर

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक, पृष्ठ - 121 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ - 113 ।

ही रहूँगी ।"[1] मतलब साफ है कि राजीव का व्यक्तित्व बहुत गहरा है जिसका अंतर्मन जानना कठिन काम है । अपने दिल की थाह का पता वह किसी को भी लगने नहीं देता । यही कारण है कि हेमंत को भी उसके पद या नौकरी के बारे में पता नहीं चलता कि वह गुप्तचर विभाग का बहुत बड़ा खुफिया अफसर है । राजीव बहुत ईमानदार आदमी है । वह अपने साले हेमंत की भी किसी गैर काम के संबंध में मदद तो दूर उसका बचाव भी नहीं करता । उसे भी अपनी चाल का पता नहीं लगने देता और हेमंत की सारी काली करतुतों के विरूद्ध काफी प्रमाण जुटाता है । राजीव जब हेमंत को गिरफ्तार करनेआता है तब महत्त्वाकांक्षी और जबरदस्त चरित्र का हेमंत आत्मसमर्पण करने के बजाय आत्महत्या कर देता है । हेमंत षड़यंत्रकारी है, कलुषित दुषित कृत्यों से वह अपार धनसंचय करता है । वह समाज में अंधःकार फैलाता है ।उसके अंधःकार के साम्राज्य के खिलाफ राजीव अकेला युद्ध पुकारता है और काले साम्राज्य को उखाड़कर फेंक देता है । यही उसके चरित्र की चरमउपलब्धि है कि भ्रष्यचार के अंधःकार को नष्ट कर, समाज के लिए वह आदर्श की एक नई किरण दे देता है । इस प्रकार राजीव का चरित्र एक आदर्शवादी पुलिस अफसर, ईमानदार भारतीय नागरिक, कर्मठ और सभ्य रूप में चित्रित है ।

5.2.3 भारतीय संस्कृति के प्रतीक–रूप में चरित्र–सृष्टि

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों में भारतीय संस्कृति के प्रचार–प्रसार और देश–विदेश में विस्तार के उद्देश्य से सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में चरित्रों की निर्मिति की है ।

" अशोक " नाटक के आचार्य उपगुप्त भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं । पूरे नाटक में उनके सिद्धांत , आचार–विचार, भारतीय सांस्कृतिक तत्त्वों और धर्म सिद्धातों के महत्त्व को विशद किया है । इसके साथ–साथ सांस्कृतिक दोषों की ओर भी निर्देश किया गया है । आ. उपगुप्त महात्मा बुद्ध के आदर्शों के प्रतीक हैं और इसी वजह से उनका व्यक्तित्व एक अहिंसक ,सहृदय ,कर्तव्यशील और स्वाभिमानी चरित्र के रूप में चित्रित किया गया है । शीला और अशोक के हृदयपरिवर्तन का वास्तविक कारण भी उनके उपदेश और अप्रतिहत व्यक्तित्व का परिचायक है । आ. उपगुप्त के सांस्कृतिक और अध्यात्मिक विचार चौथे अंक के तीसरे दृश्य में देखने को मिलते हैं ।

" रेवा " नाटक के चोलराज, इन्दिरा , पुण्ड़रीक, गोविंद आदि के चरित्र भारतीय

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात, पृष्ठ– 28 ।

संस्कृति केप्रतीक हैं । चोलराज और उसकी कुमारी इन्दिरा भारत के बाहरी देशों से संबंध जोड़कर अपने पूर्वजों से अर्जित महिमामयी संस्कृति के प्रकाश को संसार के सभी देशों में बिखेरना चाहते हैं । यही एक उपाय वे सांस्कृतिक पतन से ऊपर उठने के संदर्भ में बताते हैं । उनके शब्दों में " भारतीय संस्कृति का विदेशों में प्रसार किया जाए । भारतवर्ष अन्य देशों से सम्बद्ध रहे । हम लोग फैले ।"[1] कला, सभ्यता और संस्कृति के प्रचार व प्रसार हेतु वे अपने राज्य से प्रत्येक वर्ष समय-समय पर अनेक वीतराग ब्राह्मनों , जगत्प्रसिद्ध विद्वानों व प्रवीण शिल्पियों के जत्थे विभिन्न द्वीपों में भेजते रहते हैं । चोलराज एक कर्तव्यदक्ष राजा के रूप में चित्रित है जो हमेशा अपना देश, प्रजा, संस्कृति की चिंता करता है और उस पर उपाय योजना करता रहता है । उसकी दृष्टि उन तत्त्वों पर जाती है, जो देश को समय-समय पर विभक्त करती रही है । इन्दिरा का चरित्र भारतीय सभ्यता के प्रतिष्ठापक एवं कलाप्रेमी के रूप में चित्रित है । उसके चरित्र में तेज, साहस और सौन्दर्य के गुण हैं ।

ऋषि पुण्ड़रीक का चरित्र परम्परागत गुरू, आचार्य और महान त्यागी , तपस्वी ऋषि का रूप प्रस्तुत करता है । वे महत्त्वकांक्षी सम्राट यशोवर्मा के राजगुरू भी हैं । यशोवर्मा जब शस्त्र के बल पर साम्राज्य विजय प्राप्त करना चाहते हैं तब इस संदर्भ में उनका कथन है " शस्त्र बल से शास्त्र बल सदा श्रेष्ठ है ।"[2] उनका यह भी विचार है कि " विदेशों में केवल अपनी सांस्कृतिक श्रेष्ठता के आधार पर ही कोई देश अपना प्रभाव बढ़ा सकता है । जो देश शस्त्र के आधार पर विजय प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं, वे अपहरण करते हैं ।"[3] ऋषि पुण्ड़रीक " सांस्कृतिक विजय विश्वभर का कल्याण करेगी "यही संदेश देते हैं । इसीसे उनका चरित्र महान तपस्वी और परम्परागत आचार्य के आदर्श को प्रस्तुत करता है ।उनका चरित्र मानवीय बन पड़ा है इसी कारण वे शस्त्र विजय की अपेक्षा शास्त्रविजय और साम्राज्यविजयी के स्थान पर मानवहृदय-विजयी सम्राट बनजाने की सलाह युवराज यशोवर्मा को देते हैं ।

5.2.4 अन्य चरित्र-सृष्टि

" अशोक " नाटक में चण्ड़गिरी एक जबरदस्त चरित्र है ,जो नाटक में अपना एक अलग ही स्थान निर्माण करता है । चण्ड़गिरी सम्राट अशोक का सेनापति है । उसका चरित्र

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -रेवा, पृष्ठ - 30 ।

2 वही, पृष्ठ - 33 ।

3 वही, पृष्ठ - 33 ।

नीतिकुशल , वीर सेनापति के रूप में चित्रित है । चण्ड़गिरी एक क्रूर ,पाषाणहृदय, निर्लज्ज परंतु नीतिकुशल और स्वामीभक्त के रूप में चित्रित किया है । इसके राक्षसी शरीर में स्वामीभक्ति की जो मानवीय धारा बहती है इसी कारण उसका व्यक्तित्व चमक उठता है । अपने स्वामी के लिए वह कुछ भी करनेके लिए तैयार है । अपने स्वामी अशोक की मगध महासाम्राज्य का सम्राट बनने की महत्त्वाकांक्षा को पूर्ण करने के लिए उनके मार्ग का कॉंटा "युवराज सुमन (अशोक का बड़ा भाई) को भारी षड़यंत्र और नृशंसता के साथ निकाल देता है । पर अशोक के प्रति वह प्रामाणिक है । उसके शब्दों में " मेरा यह दानव पन आपके चरणों पर न्यौछावर है,महाराज ।"[1] वह कहा करता था कि "मालिक जहॉं आपका पसीना गिरेगा वहॉं मैं अपना खून बहा दूँगा ।"[2] और सचमुच कलिंग युद्ध में वह अशोक के लिए अपने प्राणों की बलि चढ़ाता है ।

" रेवा " नाटक के श्रीदेव का चरित्रांकन एक आदर्श और आज्ञाकारी सेनापति के रूप में चित्रित है । वह अपने स्वामी सम्राट यशोवर्मा के अस्तित्व में ही अपना अस्तित्व स्वीकार करता है । वह भी अपने स्वामी के अस्तित्व को बचाए रखने के लिए अपने अस्तित्व को समाप्त कर देता है । चम्पा युद्ध में वह युवराज यशोवर्मा के खातिर अपने प्राण त्याग देता है ।

" अशोक "नाटक में तिष्यरक्षिता का चरित्र एक पति के कुकृत्यों का प्रायश्चित स्वयं करनेवाली नारी के रूप में अंकित है । वह अपने पति अशोक के दुष्कृत्यों का प्रायश्चित स्वयं करती है । वह साम्राज्य विस्तार की महत्त्वाकांक्षा को पूर्ति में संलग्न अशोक की व्यग्रता एवं व्यस्तता की वजह से अपने दांपत्य जीवन में एक प्रकार का अभाव एवं सुनापन महसूस करती है इसी कारण वह एक बार अशोक से कहती है " मुझे तो सिर्फ तुम्हारे हृदय का साम्राज्य चाहिए मेरे नाथ ।"[3] दांपत्य जीवन की अभावग्रस्तताको सहन कर वह अपने पति के कार्यों का संपूर्ग दायित्व अपने ऊपर लेकर उनके लिए मंगलकामना करती हैं । तिष्यरक्षिता का चरित्र भारतीय आदर्श पत्नी तथा एक आदर्श नारी का चरित्र है ।

इस तरह विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों में महत्त्वाकांक्षी, आदर्शवदी और संस्कृति के प्रतीक चरित्र की सृष्टि की है । विवेच्य नाटकों में सामाजिक संवेदनशील तथा मानवीय संवेदना को लेकर चलनेवाले एवं देशभक्त चरित्रों की सृष्टि है । विद्यालंकार जी ने अमानवीय तथा खतरनाक चरित्रों का हृदयपरिवर्तन दिखाकर एक अदर्श ही प्रस्थापित किया है । " न्याय की रात

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक,पृष्ठ – 51 ।

2 वही, पृष्ठ – 58 ।

3 वही, पृष्ठ – 43 ।

के भ्रष्ट सरकारी अफसर सदानंद का हृदयपरिवर्तन कमला के संपर्क से होता है । नाटककार ने अपनेनाटकों में पात्रों का हृदयपरिवर्तन अचानक नहीं किया है तो उनमें मानवीय संवेदना के अंश को पहले से ही स्थायी रूप में रखा था जिसके जरिए हृदयपरिवर्तन संभव हो सके । तात्पर्य वे इस प्रकार से समाज की कलुषित एवं बिगड़ी हुई मानसिकता को बदलकर उनका ह्दय परिवर्तन करना चाहते हैं । सदानंद हेमंत का ही पूरक पात्र है । अतः भ्रष्टाचार का प्रतीक है और पूरे हिंदुस्थान में फैला है । वह एक बदमाश अफसर के रूप में चित्रित है जो अपने जीवन में हमेशा बुरे, बेईमान भ्रष्ट लोगों का साथ देता चला आया है । मगर शरणार्थी लड़की कमला की उसके प्रति असीम श्रद्धा और अगाध विश्वास की परिणती उसके हृदयपरिवर्तन में हो जाती है । " न्याय की रात " का जुगलकिशोर एक सुशिक्षित , होनहार, होशियार एवं बेकार युवक का प्रातिनिधिक चरित्र है जो अपने देश के लिए मर मिटने की ख्वाहिश मन में लेकर घुमता है लेकिन गन्दे समाज का उसे काफी बुरा अनुभव आया है जो स्वार्थ हेतु देश को मिट्टी में मिलाने का प्रयास कर रहे हैं । अतः चिंतित हैं। वह अपने बचपन की साथी कमला का स्नेह पात्र बन जाता है । इस प्रकार जुगलकिशोर एक सुशिक्षित, देशप्रेमी युवक के रूप में चित्रित है तो कमला भोली-भाली, डरपोक, सुशिक्षित ,अनाथ एवं शरणार्थी लड़की रूप में चित्रित है ।

निष्कर्ष

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटकों का चरित्र-शिल्प नाट्यतंत्र के अनुकूल है । नाटककार को चरित्रांकन में यथेष्ट सफलता प्राप्त हुई है । उनकी पात्र संयोजन की शैली काफी प्रभावशाली है जिनके कारण कथावस्तु में आकर्षकता, विश्वसनीयता एवं रोचकता जैसे तत्त्वों का निर्माण हुआ है । नाटककार ने चरित्र के रूपगठन में चरित्र के व्यक्तित्व के अनेक रूपों , गुणों एवं विशेषताओं को स्पष्ट रूप से दिखाया है ।उन्होंने प्रमुख पात्र और गौण पात्रों की निर्मिति बड़े ही कौशल के साथ की है । उनके नाटकों के पात्र जीवन्त एवं वास्तविक जीवन से संबंधित नजर आते हैं । उन्होंने प्रासंगिक पात्रों की निर्मिति बड़े कौशल के साथ की है ।

विद्यालंकार जी के " अशोक "नाटक में कुल-मिलाकर 15 पात्र हैं । " रेवा " में 15 तथा " न्याय की रात " में 7 पात्र हैं । चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने महत्त्वाकांक्षी ,आदर्शवादी तथा भारतीय संस्कृति के प्रतीक के रूप में चरित्रों की सृष्टि की है । उन्होंने पात्रों के सभी पहलुओं

को चित्रित किया है । ये पात्रों की मूल और स्वभावगत प्रवृत्तियाँ है जो चरित्र की अपनी-अपनी विशेषत स्पष्ट कर देती हैं । उन्होंने चरित्र के हृदयपरिवर्तन कीयोजना काफी कुशलतापूर्वक और बुद्धिमानी से की है । हृदय परिवर्तन के अनुकूल चरित्र की पहले से ही प्रवृत्ति का दर्शन कराया है जिससे हृदय परिवर्तन असंगत और अवांछित न लगे ।

विद्यालंकार जी ने पात्रों के चरित्र की निर्मिति घटना विशेष और समय विशेष के अनुकूल की है । चरित्र का गठन संवेदनशील , स्वभाव को दृष्टि में रखकर किया है जिससे देश समाज और व्यक्ति का कल्याण हो । पात्रानुरूप भाषा और शैलीगत लाक्षणिकता की दृष्टि से उनके नाटक अधिक संवेदनापूर्ण हैं । उनकेनाटकों का प्रत्येक पात्र अपना एक अलग अस्तित्व लेकर आता है और पूरे नाटक में अपना प्रभाव छोड़ जाता है । निष्कर्ष यह कि चरित्र शिल्प की दृष्टि से विवेच्य नाटक पूर्णतः सफल हैं ।

5.3 **संवाद-शिल्प**(संवाद योजना)

नाटकीय संवादों के रूपगठन को संवाद-शिल्प कहा जाता है । संवाद नाटक का प्राणतत्त्व है । डॉ. शान्ति मलिक लिखते हैं कि " संवाद नाटक का प्रधानएवं परमावश्यक तत्त्व है,इसे नाटयकला का मूल और आदि प्रेरणास्त्रोत कहा जा सकता है ।"[1] संवाद के माध्यम से नाटककार किसी मुलभूत विचार,वस्तुगत तथ्य या समस्या को अधिक वास्तव रूप में प्रकट करने और उसे बड़े स्वाभाविक एवं प्रभावी बनाने के लिए अपने शिल्प चातुर्य का प्रयोग करता है । पाश्चात्य विद्वान रोनाल्ड पिकाक ने कहा है कि " कथन या भाषण कार्यव्यापार कथावस्तु तनावों का एजेंट है । कथनपात्रों के सबंन्धियों और उनकी भावनाओं को विकास एवं परिवर्तनशीलता को लगातार गति को प्रकट करनेकी सक्रिय भाषा है । बाह्य कार्यव्यापार तथा उद्देश्य दोनों को भाषा का कथन स्पष्ट बनाता है ।"[2] अर्थात कथावस्तु को आगे बढ़ाने में और पात्रों के चरित्र विकास में संवाद महत्त्वपूर्ण होते हैं । नाटक में वातावरण निर्मिति भी संवादोद्वारा की जाती है ।

अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटक विधा में सवांद शिल्पका महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

---

1 डॉ. शान्ति मलिक - नाटय सिद्धांत विवेचन, पृष्ठ- 71 ।

2 गिरिजासिंह - हिंदी नाटकों की शिल्प विधि , पृष्ठ - 330 ।

नाटककार कथाशिल्प और चरित्रशिल्प के पश्चात जिस प्रक्रिया द्वारा उचित ढंग से दृश्यविधान , वस्तुविधान, व्यापारविधान, चरित्र प्रकाशन एवं कथाविकास करता हुआ सामूहिक प्रभाव उत्पन्न कर अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफल होता है वह है-संवाद शिल्प ।

विद्यालंकार जी के नाटकों में सवांद-शिल्प

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटकों के संवाद-शिल्प को परखने के लिए संवादों के गुणों की कसौटी को देखना आवश्यक है ।संवादों की भाषा का बोधगम्य होना, स्पष्ट होना, छोटा होना, कथानक के भावों के अनुकूल होना, स्वाभाविक , चरित्र-चित्रण की क्षमता से पूर्ण, अन्तर्द्वंद्व को उद्घाटित करनेवाला, रोचक एवं नाटकीय होना सफल संवाद शिल्प के आवश्यक गुण हैं । विद्यालंकार जी के नाटकों में हम पाते हैं कि कहीं-कहीं संवाद छोटे प्रयुक्त हुए हैं तो कहीं ये बहुत ही लंबे बन पड़े हैं । फिर भीये संवाद सफल हैं । क्योंकि संवादों के गुण उनमें काफी मात्रा में मिलते हैं । उनके नाटकों में विविध स्तर के संवाद प्रचूर मात्रा में पाये जाते हैं उनमें है - स्वगत कथन सवांद, दार्शनिक संवाद, संक्षिप्त संवाद, काव्योचित मधुर संवाद तथा गंभीर ,मार्मिक उपदेशात्मक , नाटकीय और भावात्मक संवाद ।

5.3.1 कथा को गति देनेवाले संवाद

कथा को गतिशील बनाने में स्वाभाविक , परस्पर विरोधपूर्ण एवं आदेशात्मक संवाद सहायक होते हैं । इस बात को स्पष्ट करने हेतु गिरिजासिंह का वक्तव्य द्रष्टव्य है " पात्रों के स्वाभाविक संवादों के मध्य कथावस्तु को गतिशील बनाने की क्षमता भी होती है किन्तु सभी कथोपकथन गति देनेवाले नहीं होते । पात्रों के विरोधपूर्ण संवाद प्रायः कथा को अग्रेसर करनेवाले होते हैं ।विरोधपूर्ण कथोपकथन के अतिरिक्त आदेशात्मक कथोपकथन भी कथा को विकसित करने की सामर्थ्य रखते हैं।"[1]

जब तक्षशिला में लोग विद्रोह कर उठते हैं तब युवराज सुमन और अशोक के बीच जो वार्तालाप होता है उससे कथानक आगे बढ़ने में मदद होती है । दोनों के बीच संवाद द्रष्टव्य हैं

---

1 गिरिजासिंह -हिंदी नाटकों की शिल्प-विधि, पृष्ठ - 339 ।

" सुमन – खैर , जाने दो । यह बताओ कि तुमने तक्षशिला जाने के संबंध में क्या निश्चय किया है ?

अशोक– तक्षशिला के विद्रोह को तो मैं बच्चों का खिलवाड़ समझता हूँ । दो–एक व्यक्तियों के कान ऐंठ देने से ही यह, विद्रोह शान्त हो जाएगा ।

सुमन – मगर कान ऐंठने के लिए भी तुम्हारा वहाँ जाना जरूरी है न ?

अशोक – जाने में तो कोई हानि नहीं । परन्तु इन दिनों राजधानी में ही रहने को जी चाहता है।

सुमन– यह किसलिए ?

अशोक– इसका कोई विशेष कारण नहीं है युवराज ।यों ही बाहर जाने को जी नहीं चाहता ।

सुमन– मगर राजकीय कर्तव्य जी की चाह से ऊपर की चीज है, यह तो तुम मानते हो न अशोक ?

अशोक– इस साम्राज्य के युवराज को राजकीय कर्तव्य की चिन्ता एक साधारण राजकुमार की अपेक्षा अधिक होनी चाहिए ।"[1]

अशोक की अधिकार लोलुपता, प्रचंड आत्मविश्वास और ईर्ष्याभाव के बीज इन संवादों के माध्यम से स्पष्ट हो जाते हैं । वह साम्राज्य पर अधिकार प्राप्त करना चाहता है ।उसे बड़े भाई के साम्राज्य का उत्तराधिकारी बनना पसंद नहीं है । यद्यपि वह इसे छिपाना चाहता है किन्तु संवाद का ढंग उसके अपराधी होने के साथ–साथ कथा को गतिशील बनाने का संकेत देता है ।उक्त संवाद चरित्र का उद्घाटन करने में भी सक्षम सिद्ध होते हैं ।

" रेवा " नाटक के जनार्दन और यशोवर्मा के संवाद कथा को गतिशील बनानेमें सफल हैं । यशोवर्मा काम्बोज के युवराज हैं और जनार्दन उनके सेनापति । उनके संवादों से युवराज का राज्यसंचालन के लिए शस्त्रप्रयोग का दृढ़निश्चय स्पष्ट होता है । उनके संवाद यहाँ द्रष्टव्य हैं–––

"जनार्दन– ऋषि पुण्ड़रीक तुमसे क्या चाहते है ?

यशोवर्मा– ऋषि पुण्ड़रीक का कथन है कि शस्त्र–बल से शास्त्र–बल सदा श्रेष्ठ है।

जनार्दन– तो इसमें गलती कहाँ है ?

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ – 7–8 ।

यशोवर्मा– इसमें गलती उस जगह पर आती है ,जहाँ राज्य का संचालन भी शस्त्र की बजाय केवल शास्त्र के बल पर करने का प्रयत्न किया जाता है ।"[1] यशोवर्मा के राज्यसंचालन और शस्त्र प्रयोग के दृढ़निश्चय से राज्यसंचालन में सुव्यवस्था, प्रगति ,सुधार और राष्ट्रनिर्माण का उद्देश्य स्पष्ट होता है जो आगे चलकर यशोवर्मा अपनी ताकत के बल-बूते स्पष्ट कर देता है ।

5.3.2 **चरित्र का उद्घाटन करनेवाले संवाद**

संवादों के जरिए पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ, उनका रहन–सहन, रूचि आदि का बोध होता है । " अशोक "में पाटलिपुत्र का समाचार दूत राजकुमार तिष्य के सामने कथन करता है जिससे युवराज सुमन के चरित्र का उद्घाटन होता है । संवाद काफी लंबे हैं परंतु सुमन के चरित्र का अंकन करने की उनमें पूर्ण क्षमता है। दूत और राजकुमार तिष्य का संवाद यहाँ द्रष्टव्य है ---

"दूत – राजकुमार अशोक पाटलिपुत्र के चारों ओर घेरे डालकर पड़े हुए थे । नगर के सभी द्वार बन्द थे । नागरिकों में इतना गहरा रोष था कि वह रोष पाटलिपुत्र के इतिहास में अदृष्टपूर्व है । पाटलिपुत्र के नगर भवन के सम्मुख राजकुमार अशोक की जो प्रस्तर मूर्ति है, उस पर एक रात में कम से कम एक लाख जूते पडे होंगे । उस मूर्ति का नाक–मुँह सभी कुछ जूतों की इस निरन्तर मार से घिस गया है ।

तिष्य – आखिर युवराज करते क्या रहे ?

दूत – उन्हें जब मालूम हुआ कि नागरिक राजकुमार अशोक की प्रस्तर–मूर्ति का अपमान कर रहे हैं, तो स्वयं स्थान पर पहुँच कर उन्होंने अपने शरीररक्षकों को उस मूर्ति की रक्षा के लिए नियुक्त कर दिया ।

तिष्य – इसके बाद ?

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 33 ।

दूत – इसके बाद उन्होंने भग्न हृदय से पाटलिपुत्र के नगर भवन के सामने एकत्र हुई हजारों नागरिकों की भीड़ से कहा, " भाईयों आप लोग जब अशोक की मूर्ति का अपमान करते हैं तो मेरा अपमान करते हैं। आप लोग मेरी मानिए और नगर के द्वार खोल दीजिए ।"[1]

अशोक अपने पिता की मृत्यु के बाद बड़े भाई युवराज सुमन को राज्य का उत्तराधिकारी न मानकर स्वयं पाटलिपुत्र पर आक्रमण करने के लिए सैनिक लेकर आया है । जनता इस पर क्रूद्ध है वह अशोक के खिलाफ युद्ध छेड़न चाहती है पर युवराज सुमन के हृदय मेंअशोक के प्रति प्यार है वह उससे युद्ध करना नहीं चाहते उसे सहर्ष राज्य सौंप देना चाहते हैं। इससे युवराज सुमन की चारित्रिक ऊँचाई कादर्शन होता है ।

"न्याय की रात " में मुन्शी और हेमंत के संवादों से राजीव का चरित्र हमारे सामने आता है —

"मुन्शी – राजीव जी को आप बचपन से जानते है । आन दोनों सहपाठी रहे है न ?

हेमंत – हाँ वह और मैंएक ही कॉलेज में पढ़ते थे । वह मुझसे दो ही साल छोटा है ।अपनी-अपनी श्रेणी में हम दोनों की धाक थी । राजीव की तो इसलिए कि वह सदा अपनी श्रेणी में प्रथम आता था और मेरी इसलिए कि मेरी करतुतें ही कुछ ऐसी थी । मेरे कॉलेज छोड़ने के तीनवर्ष बाद एम.ए. में प्रथम श्रेणी और प्रथम स्थान प्राप्त कर आई.सी.एस. की प्रतियोगिता में बैठा और पहले ही साल सफल भी हो गया ।"[2] यहाँ पर हेमंत और मुन्शी के संवादोंद्वारा राजीव के व्यक्तित्व की पहचान उनकी असाधारण बुद्धिमत्ता जैसे चारित्रिक गुणों का उद्घाटन किया है ।

5.3.3 **स्वगत कथन**

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों नें स्वगत कथन का काफी मात्रा में प्रयोग किया है जिससे पात्रों का चरित्र उनका अन्तर्द्वद्व तथा कहीं-कहीं कथा के सूचक रूप में संवाद दृष्टिगोचर होते हैं --

---

1. चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ-52-53 ।

2. चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ – 27-28 ।

" अशोक – मेरे हृदय में यह कैसा द्वंद्व चल रहा है , यह कैसी अनोखी–सी अनुभूति है । मैं इतना कैसे गिर गया । मैंने अपने भाई को जेल में डाल रखा है ।उस भाई को जिसने सदा मेरी भलाई सोची, सदा मेरी तरफदारी की । मुझे स्मरण है माताजी सुमन को ज्यादा प्यार किया करती थी, सुमन बड़ा था उसे रोज नई–नई चीजें मिलती थी परन्तु वह अपना सभी मुझे दे दिया करता था । मुझे कभी उसकी किसी भी विशिष्ट वस्तु को ललचाई हुयी निगाह से नहीं देखना पड़ा । ठीक अपनी उसी सहज उदारता के समान सुमन ने आज अपना समस्त साम्राज्य भी चुपचाप मेरे हवाले कर दिया । सुमन ! भाई ! मुझे माफ करना । और मेरी यह भाभी .....यह इस लोक की नहीं है । यह देवी है । अशोक, तुम अधम हो कि अपनी इस माता स्वरूप भाभी के चरणों पर सिर झुकाकर रो तक भी नहीं सके । वह देवी तुम्हें क्षमा कर देती तो तुम्हारे सम्पूर्ण पापों का क्षण–भर में प्रायश्चित हो जाता ।"[1]

अशोक के इस स्वगत कथन से सुमन के उदार हृदयी स्वभाव तथा शीला की चरित्रगत विशेषताएँ स्पष्ट हुई हैं और यहाँ अशोक का अन्तर्द्वंद्व भी स्पष्ट हुआ है ।संवाद की भाषा सहज, स्वाभाविक प्रतीत होती है ।

" रेवा " में स्वगत संवाद काफी लम्बे हैं । यशोवर्मा का स्वगत कथन उसकी मानसिकता का अन्तर्द्वन्द्व प्रकट करता है तथा समाज व्यवस्था संबंधी स्पष्टोक्ति और आशाद्वीप की महारानी रेवा का चरित्रांकन करता है । जैसे ---

"यशोवर्मा – (आप ही आप) इस विश्व में जैसे सभी जगह अहंकार , दंभ, छल और अपहरण का आधिपत्य है । सभी देश, सभी राष्ट्र, सभी जातियाँ एक–दूसरे को हड़प कर जाने का प्रयत्न कर रही है ।सभी अपने को श्रेष्ठ मानते है और दूसरों को दलन करने योग्य । परंतु इस विश्व में भी एक छोटा-सा कोना है जहाँ दंभ, छल और हत्या का राज्य नहीं हैं ।जहाँ प्रतिद्वंद्विता नहीं है जहाँ इर्ष्या नहीं है, जहाँ बदले की भावना भी नहीं है ।वह अत्यंत छोटा–सा आशाद्वीप ! वह स्वर्ग का एक कोना और वहाँ की महारानी रेवा ! मुग्धा, चकिता, हरिणी की–सी वे आँखे वह गम्भीर विचार शक्ति और वह देवदुर्लभ रूप । मैं इस सब के अयोग्य था । स्वर्गराज्य की उस साम्राज्ञी ने मेरा जो आदर सत्कार किया उससे शुरू–शुरू में मैं समझा था कि जैसे वह मुझे चाहती है परंतु मैं गलती पर था । उसका विशाल हृदय इतना बड़ा है कि मेरे जैसे अभागी व्यक्ति के हृदय को अपने स्नेह से लबालब भर कर भी वह स्वयं भरा का भरा ही रहता

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ– 65 ।

है । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावाशिष्यते ।"[1] स्पष्ट है कि इस तरह के स्वगत कथन नाटक में पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं को प्रकट करने में अत्यंत सफल बन पड़े हैं ।

" न्याय की रात " नाटक में हेमंत का स्वगत कथन उसके चरित्र पर प्रकाश डालने में सक्षम है । इस कथन द्वारा हेमंत की कुटिलनीति स्पष्ट होतीहै ।उसकी षड़यंत्रकारी, स्वार्थी प्रवृत्ति पर प्रकाश डाला जाता है । जैसे ---

" हेमंत -(आप ही आप) इतना आगे बढ़ आया हूँ कि अब मेरे लिए लौटने की राह बंद हो चुकी है । राजीव मुझ पर विश्वास करने लगा है । सदानंद अब मेरी मुठ्ठी में है । तम्बाकु कंपनी ने जिन दिनों सबसे अधिक बेईमानियाँ की थी, उन दिनों कमला ही उसकी सेक्रेटरी थी । अब कमला न रहे तो सारा मामला सुलझ जाता है । कितनी दिलचस्प बात है दो बड़े-बड़े बदमाशों के काले कारनामों का सारा बोझ एक निरीह लड़की पर डाल दिया जा सकता है, क्योंकि इतने ही में कानून का पेट मजे में भर जाता है । हः हः हः । कानून का पेट ।"[2] हेमंत के चारित्रिक विशेषता के साथ-साथ साजिश तथा कथा की सूचना भी इस स्वगत कथन से मिलती है|

5.3.4 विचारों, सिद्‌धांतों तथा दार्शनिकता से युक्त संवाद

विचारों, सिद्‌धांतों तथा दार्शनिकता से युक्त संवाद नाटक के कथानक को मजबूत बनाते हैं तथाउसमें आकर्षण पैदा करते हैं । " अशोक "में आचार्य उपगुप्त और शीला के संवादों में दार्शनिक विचारों के दर्शन होते हैं । जैसे ---

"शीला - यह भयानक जन संहार कब समाप्त होगा पिताजी ?

उपगुप्त- कुछ कहा नहीं जा सकता शीला । मानव हृदय का अहंकार इस युद्‌ध के मूल में है । व्यक्ति का अहंकार फैलकर जब समाज या जाति का अहंकार बन जाता है तब उसकी जड़े पाताल तक चली जाती है । दोनों पक्षों में से जब तक एक पक्ष के अंहकार का पूर्ण नाश न हो जाएगा तब तक यह लड़ाई बन्द न होगी ।"[3]

"न्याय की रात " में मुन्शी देवराज और हेमंत दूसरों को फँसाते रहते है वे झूठ का सहारा लेते है। लेकिन एक दिन राजीव और उमा के सामने उनकी पोल खुलती है तब दोनों के

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -रेवा, पृष्ठ - 154-155 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -न्याय की रात , पृष्ठ -

3 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -अशोक, पृष्ठ - 98-99 ।

बीच हुए संवाद से जीवन की व्याख्या की जाती है । जैसे --

" हेमंत - हम और तुम बुरी तरह फेल हो मुन्शी जी ।

मुन्शी - अजी जनाब, अपने को फेल मानने वाले लोग कोई और लोग होंगे । यह तो जिदंगी है, जिंदगी में ऊँच-नीच तो आता ही रहता है।"[1]

" रेवा " में इन्दिरा और चोलराज के संवाद से भारतवर्ष की वर्तमान परिस्थिति और संस्कृति पर प्रकाश डाला है । ये संवाद विचारात्मक तथा दर्शन की छटा से युक्त हैं । चोलराज इन्दिरा से कहते हैं " जिस तरह पिघला हुआ लोहा फैलकर अपने संपूर्ण मल को खो देता है, उसी तरह हम भी फैलें । हम लोगों की आन्तरिक दुर्बलताएँ इसी संघर्ष से दूर होंगी । और कोई उपाय नहीं है बेटी । संसार भर के संपूर्ण देशों पर भारतवर्ष का प्रभाव है । अन्य देश अभी तक हमें संसार का सर्वप्रथम देश समझें हुए हैं । परंतु यहाँ भीतर-ही-भीतर सभी कुछ जर्जरित होता चला जा रहा है । यह परिस्थिति कब तक चलेगी । हमारी आन्तरिक दुर्बलता पर कब तक परदा पड़ा रह सकेगा । आखिर यह कब तक छिपा रहेगा कि हम लोगों में परस्पर आधारभूत एकता का तत्त्व तक नहीं है ।"[2] नाटककार ने इसमें पात्र के विचार तथा दर्शन को प्रकट किया है ।

5.3.5 **संक्षिप्त एवं नाटकीय संवाद**

इन संवादों में पात्रअपने विचारों को एक के बाद एक और नाटकीय ढंग से प्रस्तुत करते हैं । विद्यालंकार जी के नाटकों में संक्षिप्त तथा नाटकीय संवादों की बहुलता प्रतीत होती है इसी वजह से नाटकों में रोचकता आई है । " अशोक " में स्थित संक्षिप्त एवं नाटकीय संवाद देखिए ---

" विदेशी सैनिक -अशोक तक्षशिला गया है ।

नेता - सचमुच ?

विदेशी सैनिक - जी हाँ ।

एक आवाज -चलो उस पर हमला करें ।

दूसरी आवाज - अशोक के शिविर को आग लगा दो ।

तीसरी आवाज -अशोक का नाश हो ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -न्याय की रात , पृष्ठ - 41 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ - 30 ।

सब लोग – अशोक का नाश हो

चौथी आवाज – चलो, अभी चलो|"[1]

यहाँ पर संक्षिप्तता तथा नाटकीयता के साथ लोगों का आवेश भी प्रकट है । अतः इन संवादों को आवेशात्मक संवाद कहना अनुचित न होगा ।

" रेवा " में स्थित संक्षिप्त तथा नाटकीय संवाद द्रष्टव्य हैं ---

" इन्दिरा – तुम्हारा नाम क्या है युवक ?

युवक – मेरा नाम मकरन्द है ।

इन्दिरा – मैंने पहले भी शायद तुम्हें कहीं देखा है ?

मकरन्द – जी हाँ । मैं अपने पिताजी के साथ राजमहलों में अनेक बार आया हूँ । पिताजी प्रायः आपके यहाँ आते-जाते रहते हैं ।

इन्दिरा – ओहो । तुम राजश्रेष्टी के पुत्र हो । तुम किस उद्देश्य से विदेश जा रहे हो ?

मकरन्द – मैं व्यवसाय की इच्छा से विदेश जा रहा हूँ ।

इन्दिरा – कहाँ ?

मकरन्द – यह मुझे अभीतक स्वयं भी मालूम नहीं राजकुमारी ।"[2]

इस तरह के छोटे-छोटे संवादों में रोचकता भी है । " न्याय की रात " में स्थित कमला और जुगलकिशोर के बीच के संवाद संक्षिप्त भी है और नाटकीय भी । ये संवाद हँसी-मजाक और मनोरंजन भी करते हैं । जैसे ---

"कमला – क्षमा किजिए , आपका नाम जुगलकिशोर है या युगलकिशोर ?

जुगलकिशोर – जी, जुगलकिशोर । जे-यू-जी-ए, एल ।

कमला – धन्यवाद । हिज्जे मैंने आपसे नहीं पूछे थे ।

जुगलकिशोर – माफ कीजिए कमला जी मैंने आपको कहीं देखा है।

कमला – लड़कियों के बारे में लड़कों को इस तरह का धोखा प्रायः होता है ।

जुगलकिशोर – और लड़कियों को इस तरह का धोखा नहीं होता क्या ?

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ– 12 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ – 24 ।

कमला – कभी–कभी लड़कियों को भी हो जाता है ।

जुगलकिशोर – कभी–कभी से क्या मतलब ?

कमला – जैसे मुझे भीइस तरह का धोखा होने लगा है ।"[1]

5.3.6 **काव्योचित मधुर गीत का प्रयोग –**

प्रस्तुत नाटकों में काव्योचित मधुर संवाद–शिल्प की योजना भीकी गई है। उनमें प्रत्यक्ष पात्रों के वार्तालाप की अपेक्षा स्वगत काव्यमय गीतों का ज्यादा इस्तेमाल किया है। " अशोक " में शीला अपने दिल के तार झंकृत हो जाने से सहसा एकांत में गा उठती है ––

" द्वारा निकट देख सजनि । कौन गीत गाए
कौनदेस बसे पूछ आज किधर जाए
शिथिल कंठ कौनबात कहे क्या सुनाएँ
कोई सुप्त करूण भाव हृदय में छिपाए ।"[2]

" रेवा " में आशाद्वीप की महारानी रेवा दोहरी अवस्था में जी रही है । एक तरफ गृहस्थी और दूसरी तरफ राजकार्य ।ऐसे अवसर पर अपने सपनों के राजकुमार को प्रतीक्षा में वह है । उसके मन के भाव एक गीत से स्पष्ट हो जाते हैं ––

" शून्य मन्दिर में बनूँगी , आज मैं प्रतिमा तुम्हारी
अर्चना हो शून्य भोले,
क्षार दृग–जल अर्घ्य हो ले,
आज करूणा स्नात उजाला,
दु:ख हो मेरा पुजारी ।"[3]

यह गीत रेवा की प्रतीक्षा में वेदना कीजो पुकार है उसे स्पष्ट करने में सक्षम है।

––––––––––––––––––––––––

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्यायकी रात, पृष्ठ – 79 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 15 ।

3 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 150 ।

5.3.7 **सूचनात्मक खंड़ित संवाद**

विवेच्य नाटकों में कुछ स्थानों पर सूचनात्मक खंड़ित संवादों की भी योज्ना है । लेकिन " न्याय की रात " में इस प्रकार के सवांद प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं । इस नाटक में आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में फोन का इस्तेमाल जादा किया है। ऐसे संवाद दर्शकों के मन में आकर्षण पैदा करते हैं ।

"रेवा " नाटक में युद्धभूमि में यशोवर्मा और चम्पाधिपति के बीच के संवाद यहाँ द्रष्टव्य हैं --

" यशोवर्मा - -अच्छा राजन, आप मुझसे द्वंद्व युद्ध करना चाहते है या इसी प्रकार खुले युद्ध में अस्त्र प्रहार ? मैं दोनों के लिए तैयार हूँ ।

चम्पाधिपति- मुझे भी दोनों ही स्वीकार हैं । जिस चीज को तुम पसंद करो यशोवर्मा । अच्छा यशोवर्मा , तुम्हें अपने जीवन से बहुत अधिक मोह तो नहीं है न ?

यशोवर्मा - जीवन से मोह तो मुझे सचमुच है, परंतु ......।"[1]

"न्याय की रात " में हेमंत का संवाद द्रष्टव्य है --

" हेमंत - (टेलिफोन पर) जी, मैं हेमंत बोल रहा हूँ ।नमस्कार ।....आपकी कृपा है ।...प्रधानमंत्री साहब ने कल सुबह मुझे बुलाया है ? .... आठ बजे ? जरूर, जरूर । मैं हाजिर हो जाऊँगा । .... जी मेरा उनसे सादर नमस्कार कह दीजिएगा ।.... धन्यवाद.... आपकी कृपा है ।..... जी नमस्कार ।"[2] इस प्रकार के संवादों से लेखक के बुद्धिचातुर्य और संवाद-शिल्प कला चातुर्य का ज्ञान स्पष्ट हो जाता है ।

5.3.8 **उपदेशात्मक संवाद**

उपदेशात्मक संवाद अभिघात्मक शैली में होते हैं । जीवन के आदर्श और मूल्य इन संवादों से व्यंजित होते हैं । पाठकों को अनादर्श , अज्ञान, अधर्म से बचाना इन संवादों का प्रयोजन होता है ।लेकिन इन संवादों का प्रयोग उतना ही होनाा चाहिए जितना कथा-विकास के

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ - 130 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ - 37 ।

लिए आवश्यक हो ।

" रेवा " नाटक में राजगुरू पुण्ड़रीक छात्रों को उपदेश देते हैं -- " तुम्हारी सभी इच्छाओं का आधार तुम्हारा मन है न ? जिस तरह जरा-सी तेज वर्षा हो जाने से नदी में बाढ़ आ जाती है, उसका पानी किनारों को तोड़-फोड़कर बाहर निकलने लगता हैं, उसी तरह कमजोर व्यक्तित्व के मनुष्य का हृदय इच्छाओं की बाढ़ के सामने पराजय स्वीकार कर लेता है, वह असंयमित, पथभ्रष्ट और उच्छृंखल बनजाता है । परंतु जिस मनुष्य का व्यक्तित्व समुद्र के समान विशाल , गंभीर और स्वप्रतिष्ठ है, वह इच्छाओं के प्रबल प्रवाह को अपने भीतर उसी तरह पचा जाता है , जिस तरह समुद्र सैंकडों-हजारों नदियों को सहज ही में पचा लेता है । ऐसे ही व्यक्ति को शांति प्राप्त होती है । समझे बच्चों ।"[1] इस प्रकार के उपदेशात्मक कथन (संवाद) के कारण विवेच्य नाटकों में आदर्श की प्रतिष्ठापना हुई है ।

5.3.9 **प्रतीकात्मक संवाद**

लेखक या कवि बहुत बार जिंदगी के कटु सत्यों का उद्घाटन करने हेतु प्रतीक-व्यंजना या प्रतीकात्मक संवादों का आयोजन करता है । "अशोक " नाटक में युवराज सुमन और शीला के संवादों में प्रतीकात्मकता द्रष्टव्य है --

" युवराज - परन्तु पिताजी यह कैसे स्वीकार करेंगे कि इस विवाह में धूमधाम जरा भी न होने पाए ।

शीला - उनसे पूछ देखिए ।

(हवा तेज होने लगती है)

युवराज - तेज आँधी आ रही है शीला ।"[2] यहाँ पर आँधी संकटों का प्रतीक है । एक ओर अशोक विविध कार्रवाइयाँ करता है और बिम्बिसार मृत्यु शय्या पर है । " न्याय की रात " में हेमंत पर स्थित संकट दूर होने की संभावना पर हेमंत और राजीव के संवादों में प्रतीकात्मक व्यंजना मिलती है। उनके संवाद यहाँ द्रष्टव्य हैं ---

" राजीव - आप भूलते हैं हेमंत भैय्या । पिताजी ने शायद आज ही के लिए यह मंत्र आपको याद करवाया था ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ - 44-45 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक , पृष्ठ - 39 ।

हेमंत (गम्भीर होकर) शायद आप ठीक कहते हो । (आगे बढ़कर दरवाजा खोल देता है) (बाहर की ओर देखकर) वर्षा तो बन्द हो गई ।

राजीव – पर अभी तक बादल बाकी है ।"[1]

इस तरह विवेच्य नाटकों में प्रतीकात्मक संवाद भी प्रयुक्त मिलते हैं ।

5.3.10 **भावात्मक संवाद**

भावात्मक संवाद दिलो–दिमाग पर जबरदस्त आघात करने और लेखक की मनोभावभूमि को व्यक्त करने में सक्षम होते हैं । इन संवादों में सरसता, तरलता, संवेदनशीलता एवं प्रवाहमयता होती है । विवेच्य नाटकों में कुछ स्थानों पर भावात्मक संवाद भी दृष्टिगोचर होते हैं । " अशोक " नाटक के आचार्य दीपवर्धन और बेटी शीला के बीच के भावात्मक संवाद का उदाहरण द्रष्टव्य है ––

"दीपवर्धन – (मुस्कुराकर) बेटी, कितनी सुहावनी रात है । दूर से तुम्हारा स्वर सुनकर मुझे ऐसा प्रतीत हुआ ,जैसे तुम्हारी माता गा रही हो । मुझे पच्चीस बरस पहले की एक इसी तरह की चाँदनी रात की याद हो गई जब मुझसे रूठकर वह ठीक इसी स्थान पर आ बैठी थी, और ठीक इसी लय में, इतनी ही निपुणता के साथ वीणा बजाने लगी थी। बेटी, तुम्हें अपनी माँ की याद है क्या ?

शीला – (गम्भीर हो जाती है) पिताजी ,मेरी माँ भी तुम्हीं हो । मैं इस दुनिया में किसी को नहीं जानती ।

दीपवर्धन – शीला । जानती हो, तुम्हारी माँ तुमसे कितना प्यार करती थी ?

शीला – क्यों नहीं पिताजी जितना आप मुझसे करते है ।

दीपवर्धन – अभागिनी मातृहीन बच्ची मेरी ।"[2]

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि विवेच्य नाटकों में नाटककार ने कथानक के

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ – 121 ।

2. चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 16 ।

विकासात्मक दृष्टि से बहुत सोच-समझकर, सहज ,स्वाभाविक , संक्षिप्त , चुटिले , अर्थगर्भित तथा कहीं-कहीं बड़े संवादों की भी योजना की है । इनमें विविध प्रकार के संवादों का अन्तर्भाव है। इनमें संक्षिप्त, नाटकीय, कथा को गति देनेवाले , चरित्र का उद्घाटन करनेवाले , स्वगत, दार्शनिक , सूचनात्मक , खंड़ित , उपदेशात्मक, भावात्मक तथा प्रतीकात्मक आदि संवादों का अन्तर्भाव है ।

इसके सिवा व्यंग्यात्मक , पात्रानुकूल संवादों की रचना भी विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों में की है । संवाद पात्र के अन्तर्द्वन्द्व को स्पष्ट करने की क्षमता से युक्त , छोटे, रोचक, सहज स्वाभाविक और नाटकीयता से परिपूर्ण हैं । संवादों की भाषा स्पष्ट एवं बोधगम्य है निष्कर्ष यह कि संवाद-शिल्प की दृष्टि से विद्यालंकार जी के नाटक सफल सिद्ध होते हैं ।

5.4 वातावरण-शिल्प

कथावस्तु, पात्रों का व्यक्तित्व ,समय विशेष और घटनाविशेष में स्वाभाविकता तथा विश्वसनीयता लाने की दृष्टि से नाटककार अपने कौशल का प्रयोग कर उनके अनुकूल जो देश-काल और परिवेश का निर्माण करता है, वही नाटक में वातावरण-शिल्प कहलाता है ।इस संदर्भ में प्रतापनारायण टण्डन का कथन द्रष्टव्य है " देशकाल के अंतर्गत सामान्य रूप से किसी भी देश अथवा समाज कीसामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ, आचार-विचार, रहन-सहन , रीति-रिवाज तथा समाज की कुरीतियाँ या विशेषताएँ समझी जाती हैं ।"[1] नाटककार विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों में देश-काल के अनुरूप परिस्थितियाँ, आचार-विचार, रहन-सहन , रीति-रिवाज आदि बातों की निर्मिति कर उस परिवेश के अनुसार वातवारण तैयार किया है ।

उनके प्रथम नाटक " अशोक" का कथानक मौर्य सम्राट अशोक के समय का है । उन्होंने उक्तकालीन समाज की स्थिति और परिवेश के अनुसार नाटक में वातावरण निर्माण कर दिया है । उनके सभी पात्र उस समय की जिंदगी जिते हैं । उनके आचार-विचार, रहन-सहन तथा रीति-रिवाज समयानुकूल हैं । यह नाटक इतिहास और कल्पना को आधार बनाकर लिखा गया सामाजिक आदर्श प्रधान नाटक है ।इसका कथानक मध्यकालीन होकर भी इसके माध्यम से

---

1 प्रतापनारायण टण्डन - हिंदी उपन्यास कला, पृष्ठ - 300 ।

नाटककार वर्तमान लोगों को संदेश देना चाहते हैं कि लोगों का हित एकता, अखंड़ता और अहिंसा में निहित है, युद्ध ,लड़ाई–भिड़ाई का अन्त बुरा ही होता है और सामाजिक, सांस्कृतिक आदर्श, नीतिमूल्य ही समाज के आधारस्तंभ हैं ।

"अशोक" नाटक पर करूणा की गहरी छाप है। इसमें संपूर्ण वातावरण करूणामय है लेकिन अंत सुखद और उद्देश्यपूर्ण होने के कारण यह नाटक सुखान्त बन गया है । सफल वातावरण निर्मिति के कारण कथावस्तु सजीव, सशक्त एवं प्रभावशाली बन पड़ी है । उनके " रेवा " नाटक का कथानक सम्राट यशोवर्मा के स्मकालीन चोलवंश के समय का है । इसका आधार ऐतिहासिक होकर भी इसमें कल्पना का सहारा लेने के कारण यह नाटक विशुद्ध ऐतिहासिक नहीं है ।इस रचना का प्रतिपाद्य दो संस्कृतियों का संघर्ष रहा है तथा भारतीय सभ्यता,कला और संस्कृति का देश–विदेश में प्रचार करना रहा है । "रेवा " नाटक का संपूर्ण वातावरण विषादपूर्ण है अंत दु:खान्त बन गया है । " अशोक " और " रेवा " दोनों नाटकों की सर्व प्रमुख विशेषता करूणापूर्ण वातावरण की निर्मिति है । नाटककार ने कई घटना तथा अवसर विशेष पर गम्भीर वातावरण और गहन प्रसंगों के निर्माण में विशेष कौशल और पटुता दर्शायी है। करूणा का प्रवाह बढ़ाने तथा वातावरण निर्मिति में सघनता लाने हेतु वे एक ओर प्रतीकात्मक चरित्र का निर्माण करते हैं और दूसरी तरफ सांकेतिक दृश्य का आयोजन करते हैं । " अशोक " नाटक के कई दृश्य, यथा दूसरे अंक में पॉंचवॉं , तीसरे अंक में छठा तथा पॉंचवें अंको में चौथा दृश्य केवल करूणा के रंग को प्रगाढ़ बनाने के उद्देश्य से ही निर्मित किए हैं । इस कृति के तीसरे अंक में चौथे दृश्य का वातावरण ,ध्वनिविशेष के प्रकटीकरण के कारण भयावह प्रतीत होता है ।इसमें सेनापति चण्ड़गिरी के सम्राट अशोक से " असीमित अधिकर " की मॉंग , आज्ञापत्र पर हस्ताक्षर मॉंगना और अशोक का उस पर अनमने भाव से हस्ताक्षर करते वक्त उद्यान में से चील की "इल–लु–लु " की आवाज तथा अशोक का यह कथन : मेरे विश्वास का कोई अनुचित उपयोग न करना चण्ड़गिरी ।"[1] वातावरण में भयानकता निर्माण करता है । आगे चलकर सुमन के वध का दृश्य हृदय विदारक है सुमन और शीला के नियोजित विवाह की तिथि तथासमय पर षड़यंत्र से सुमन की हत्या ,अशोक का पश्चाताप और शीला का तड़पना वातावरण में विषाद की निर्मिति करता है । पहले अंक के छठे दृश्य में कापालिक का होम हवन भयानक और बिभत्स बना है । इस कृति के चौथे अंक

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ – 69 ।

के सातवें दृश्य में कलिंग युद्धभूमि का यथार्थ वातावरण है । युद्धभूमि की भ्यावहता दिखाने हेतु रात के प्रथम प्रहर में युद्ध का समय तथा रंगमंचीय संकेत जहाँ तक निगाह जाती हैं, युद्धभूमि में विनाश के चिह्न दिखाई देते हैं । टूटे हुए रथों की भरमार है । मेरे हुए मनुष्यों तथा घोड़े की लाशें सैंकड़ों की संख्या में बिखरी पड़ी हैं ।"[1] हमें मध्यकालीन वातावरण में ले जाकर युद्ध के प्रति घृणा की निर्मिति कराते हैं ।

इसी नाटक में दूसरे अंक के छठे दृश्य में सम्राट अशोक की सेना पाटलिपुत्र पर आक्रमण की तैयारी में हैं । उनमें उत्साह, हौसला कितना है यह दिखाने के लिए सैनिकों के मुख से " सुनो वीर । बजती रणभेरी ,करती दूर तुम्हें आह्वान । चलो विजय लक्ष्मी वर लावे, प्राप्त करे वैभव धन–मान ।।"[2] यह गीत योजना सैनिकी वातावरण का यथार्थ चित्र दर्शाने में सक्षम है विद्यालंकार जी ने इस नाटक में बौद्ध आश्रम व्यवस्था का वातावरण निर्माण कर भरतीय नीतिमूल्य तथा आदर्श की प्रतिष्ठापना की है । वातावरण निर्मिति में भाषा का योगदान भी महत्त्वपूर्ण है । पात्रानुकूल भाषा तथा शब्द प्रयोग हैं, जैसे – बन्दीगृह, पहरेदार, वैद्य, भिक्षु–भिक्षुणियाँ, राजमहल, सम्राट और साम्राज्ञी आदि । ये वातावरण निर्माण में उपयोगी सिद्ध होते हैं ।

" रेवा " नाटक में राजकुमारी रेवा से संबंधित कतिपय दृश्यों में करूणरस की भावस्पर्शी मार्मिक अनुभूति हमारे हृदय को छूती है। इसका पहला दृश्य तो वातावरण को बहुत ही आतंकमय बना देता है, जैसे समुद्र में भयंकर तूफान ,बड़ी–बड़ी सामुद्रिक लहरों का पहाड़ी चट्टानों पर जोर जोर से टकरा जाना, मुसलाधार बारिश, वज्रपात तथा गुरूदेव की भविष्यवाणी और रेवा को संदेश देकर समुद्र में आत्मसमर्पण करना ये बातें आश्चर्यचकित करने के साथ साथ वातावरण में सघनता बढ़ाने में सहायक हैं । इस कृति के कथ्यद्वारा ऐतिहासिक आधार और कल्पना का सहारा लेकर वर्तमान परिस्थितियों की संवेदना को ज्ञात करानेमें नाटककार सफल हुए हैं । ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में उक्तकालीन समयविशेष के अनुरूप पात्र तथा वातावरण निर्मिति में लेखक सफल रहे हैं । मध्यकालीन युद्धविषयक तंत्रज्ञान , सामाजिक और राजकीय विशेषता तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को नाटककार ने ज्ञात कराया है ।उक्त नाटक में नाटककार ने मध्यकालीन भाषा का प्रयोग कर वातावरण निर्मिति समयानुरूप की है । भाषा में राजभाण्डार (कोषागार) ,अग्निचूर्ण(बारूद), राज्याभिषेक, सैन्य, आश्रम, ऋषि , युद्धभूमि आदि शब्दप्रयोग ऐतिहासिक

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ– 98 ।

2 वही, पृष्ठ – 49 ।

वातावरण की निर्मिति में सहायक हैं । इसमें नाटककार ने धार्मिक वातावरण की निर्मिति ,श्रद्धा-अंधश्रद्धा, नीतिमूल्य, भारतीय प्राचीन कला-संस्कृति और सभ्यता से परिचित कराया है । आर्थिक ढाँचा हड़बड़ाने के मूल कारणों को (युद्ध) विशद कर उससे हुए भयंकर परिणाम की ओर संकेत किया है । संकलनत्रय की दृष्टि से नाटक समय एकान्विति और कार्य एकान्विति में सफल है किन्तु स्थल में भिन्नता होने के कारण अर्थात अनेक देशों का चित्रण होने के कारण स्थल ऐक्य की विशेषता से यह नाटक दूर है ।

प्रस्तुत नाटक में गीतों का प्रयोग भी वातावरण में हर्ष करूणा तथा हृदयद्रावकता निर्माण करने में सहायक हुआ है । यशोवर्मा के राज्याभिषेक के उपलक्ष्य में मंगलगीत और वाद्यों का आयोजन तथा रेवा की चीर प्रतिक्षा में वेदना की गहराई और तीव्रता दिखाने के उद्देश्य से करूण गीतों का निर्माण जैसे --

"कुसुम दल से वेदना के चिह्न को ,

पोंछती जब आँसुओं से रश्मियाँ " [1] वातावरण में करूणा और गम्भीरता लाने में सक्षम है । इसके साथ-साथ वातावरण में भयानकता लानेके लिए तुफान ,समुद्र की बड़ी-बड़ी लहरें का उठना, भूकंप आदि की ध्वनियोजना वातावरण निर्मिति में सफल है । नाटक के अंत में यशोवर्मा का अपने वचन की पूर्ति करने हेतु राजकुमारी रेवा से मिलने आशाद्वीप चले जाना और वहाँ भग्न अवशेष के रूप में स्वर्गसमान आशाद्वीप का खंड़हर देखकर हैरान होना, करूणा से विव्हलित होना, रेवा को कहीं भी न पाकर दुःखी होना तथा इसी स्थिति में भग्न मंदिर के पीछवाड़े से एक मैना द्वारा रेवा का प्रिय गीत " शून्य मंदिर में बनूँगी ,आज मैं प्रतिमा तुम्हारी"[2] अस्पष्ट खरखरी आवाज में गाकर उड़ जाना वातावरण में हृदयद्रावकता और करूणा निर्माण कर देता है । नाटक का अंत दुःखात है।रेवा के प्रिय गीत को मैना द्वारा अव्यक्त,अस्पष्ट आवाज में गवाकर अमूर्त ध्वनि का प्रयोग सारे वातावरण को एक साथ झंकृत कर देता है ।इसके अतिरिक्त वातावरण निर्माण के लिए नाटककार ने अतिप्राकृत अथवा अलौकिक तत्त्वों का प्रयोग भी किया है इस कृति के प्रथम अंक में पहले दृश्य की गुरूदेव की भविष्यवाणी का प्रयोग नाटक के सारभूत प्रभाव में सघनता और पूर्णता निर्माण करता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -रेवा, पृष्ठ- 97 ।

2 वही, पृष्ठ - 177 ।

" न्याय की रात " नाटक का कथानक आधुनिक काल से संबंधित है । इस नाटक का उद्देश्य स्वतंत्र्योत्तर भारत में भ्रष्टाचार का उन्मुलन तथा देश में गहरी भावात्मक एकता का प्रसार करना रहा है । इस नाटक की भूमिका में स्वयं विद्यालंकार जी कहते हैं ' इस नाटक का उद्देश्य स्वतंत्र भारत से भ्रष्टाचार का उन्मुलन तथा देश में गहरी भावनात्मक एकता का प्रसार है।"[1] हमारा देश स्वतंत्र हो गया और लोगों ने चैन की साँस ली । मन में देश के संदर्भ में "सुजलाम सुफलाम " के सपने सँजोए थे । लेकिन सपने परिस्थिति की आड में चूर-चूर हो गए, इसी का दस्तावेज है " न्याय की रात " जिस उद्देश्य को लेकर आजादी का सपना देखा था उस उद्देश्य की पूर्ति न होने के कारण भारतीयों की मानसिकता में आमूलाग्र परिवर्तन आ गया । स्वातंत्र्योत्तर भारतीय सामाजिक परिस्थिति शोचनीय बन गई है ।एक ओर परतंत्रता का अंधःकारपूर्ण इतिहास और दूसरी ओर वर्तमान राक्षसी परिवेश । संपूर्ण राष्ट्र में आजादी के बाद एक स्वप्नशीलता जगी थी, सुन्दर सुरक्षित और भविष्य की आशा थी । वर्तमान स्थिति में ये सपने बुरी तरह टूट गए । आज नैतिकता की दृष्टि से आदर्श नहीं रहा । सरकारी अफसर रिश्वत लेकर गैरकानूनी कार्यों को प्रोत्साहन दे रहे हैं । आज भ्रष्टाचार ही शिष्टाचार और अनैतिकता ही नैतिकता बन गई है । इसी संवेदना को विद्यालंकार जी " न्याय की रात " में प्रकट करते हैं । इसी सामाजिक वातावरण का चित्रण उन्होंने बहुत मार्मिकता से किया है । जुगलकिशोर के शब्दों में आज का सामाजिक वातावरण देखिए " अब किसी भी जगह वह पुरानी बात नहीं रही है । सब जगह खुशामद , पक्षपात और जिकड़मबाजी का दौर-दौरा है । योग्यों की कोई कदर नहीं करता तिकड़मबाज अत्यंत अयोग्य होते हुए भी तरक्की पाते चले जाते हैं ।"[2] इसके साथ ही अवसरवादी प्रवृत्ति और किसी बात में फायदा उठाने की प्रवृत्ति नीतिमूल्यों में आई गिरावट का उदाहरण है । सदानंद के शब्दों में देखिए "रामनाम की महिमा सुनी है न तुमने ? इस कलिकाल में वह शक्ति परमात्मा के बनाए कुछ बन्दो के नामों में आ गई है। फर्क इतना ही है कि राम नान की महिमा युगोंतक चली, इन बन्दों की ताकत सिर्फ तब तक रहती है, जब तक ये कुर्सी पर रहते हैं ।आज इस बात का ज्ञानरखना जरूरी है कि किस मौके पर कौन-सा नाम अमोध सिद्ध होता है ।[3] इसमें आज के समाज का विकराल परिवेश तथा भयंकर सामाजिक प्रवृत्तियों का दर्शन होता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -न्याय की रात , पृष्ठ - 19-20 ।

2 वही, पृष्ठ - 81-82 ।

3 वही, पृष्ठ - 76 ।

स्वतंत्र्योत्तर भारत में स्थित भ्रष्टाचार , रिश्वत, दलाली, गरीबी, स्वार्थ और दो मुँहापन आदि बातों से युक्त अधःकारमय परिवेश विवेच्य नाटक में मिलता है । नैतिकता का नकाब ओढ़कर अनैतिक कृत्य करनेवाली राक्षसी हेमंत!.प्रवृत्ति , खुले आम रिश्वत के रूप में अफसरों के लिए शरणार्थी लड़कियों को भेंट चढ़ाना , मानव कमजोरियों से लाभ उठाना, शासनतंत्र की असमर्थता ,अव्यवस्था, उसमें फैला भ्रष्टाचार , रिश्वतखोरी, दप्तर दिरंगाई , भाई–भतीजावाद आदि प्रवृत्ति का भंड़ा–फोड़ करना नाटककार का उद्‌देश्य है ।

वातावरण निर्मिति पात्रों की भाषा तथा उनके रहन–सहन आदि पर भी निर्भर है । क्योंकि वातावरण निर्मिति में भाषा,रहन–सहन आदि का महत्त्वपूर्ण स्थान है । नाटककार ने आधुनिक वातावरण को मध्यनजर रखते हुए चरित्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है । अधिकांश पात्र शिक्षित वर्ग के होने के कारण उनकी भाषा में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक भी है और आधुनिक वातावरण का प्रदर्शक भी । हेमंत सुशिक्षित बिजनैसमैन है अतः उसकी भाषा में रतिस्टर, ड्रिंक्स, सेक्रेटरी, सिविल सप्लाईज , चीफ कन्ट्रोलर, मशीन टूल्स आदि अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग वातावरण निर्मिति में सहायक है । सदानंद एक ऊँचे दर्जे का सरकारी अफसर है । उनके और जुगलकिशोर के बीच चल रहे वार्तालापमें आधुनिक परिवेश तथा भाषा का बोध होता है । जैसे

" सदानंद – पोस्ट कौन–सी है?

युवक – परचेस आफीसर

सदानंद – अच्छा , कुछ याद तो पड़ता है ।यह तो प्रथम श्रेणी की गजेटिड पोस्ट है न ?"[1]

नाटककार रंगमंच सज्जा से देश काल–वातावरण का बोध कराने में सफल है । " न्याय की रात " नाटक में दो स्थानों पर नाटक की व्यवस्था की है । 1. हेमंत्कुमार की बैठक और 2. सदानंद का दप्तर । हेमंतकुमार की बैठक का वर्णन करते हुए नाटककार रंगमंच के लिए अनुकूल वातावरण की सृष्टि करता है जो इस प्रकार है " हेमंतकुमार की बैठक – बैठक पाश्चात्य ढंग से सजी है और दो हिस्सों में बटी–सी दिखाई देती है । यहीं बैठक हेमतंतकुमार के दप्तर का भी काम देती है । दाहिनी ओर एक बड़ी मेज रखी है, जिस पर फाइलों ,रैक आदि ठीक ढंग

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात ,पृष्ठ – 71 ।

से सजाए गए हैं । इस मेज के किनारे दीवार की ओर पीठ किए धूमनेवाली एक सुन्दर कुर्सी पर हेमंत बैठा है । ..... हेमंत की मेज के बाईं ओर एक टेबल रखी है जिसके पास हेमंत का निजी सहायक और मुन्शी देवराज बैठा है इसी तिपाई पर हरे रंग का एक टेलिफोन पड़ा है ।"[1] इस प्रकार की रंगमंच सज्जा से आधुनिक कालीन वातावरण का बोध होता है ।

वर्तमान युग में भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, बेईमानी आदि के कारण बेरोजगारी ने विकृत रूप धारण कर लिया है ।हेमंत जैसे तिकड़मबाज बिजनेसमैन और पाखण्डी नेता तथा सदानंद जैसे भ्रष्ट अधिकारी पैसों के बलबूते पर जनसामान्य जनता पर अन्याय, अत्याचार कर रहे हैं और स्वयं ऐशों आराम की जिंदगी बिता रहे हैं । सेठ लोग अवैध परमिट लेने के लिए उत्सुक हैं तथा इसके लिए नेता लोगों को काफी धन देते हैं ।इसका बोध मुन्शी देवराज के इस संवाद से होता है " ठीक रकम तो मुझे याद नहीं । पर उन दिनों आपने बाजार से खरीद फरोख्त भी तो बहुत की थी । जिन लोगों से काम लेना होता था उनके लिए ट्रान्जिस्टर, रेडियोग्राम , कालीन , कीमती घड़ियाँ , कैमरे आदि जो कुछ भी खरीदा गया, उन सब की भुगतान भी तो सेठ ही ने की थी साहब ।"[2] इस नाटक में वर्तमानकालीन शोषण-प्रवृत्ति , धोखेबाजी, बेईमानी, आर्थिक दुरावस्था तथा नैतिक पतन आदि का गंदगीपूर्ण वातावरण हमारी आँखों के सामने खड़ा होता है ।

इस कृति में संकलनत्रय का पालन विशिष्ट सीमा तक पाया जाता है । काल की एकता और कार्य की एकता का पालन जरूर हुआ है मगर स्थल की एकान्विति के बारे में कहा जाए तो इसका पालन नहीं हुआ । इस नाटक का प्रथम और तृतीय अंक हेमंतकुमार की बैठक में तो द्वितिय अंक सदानंद के दप्तर नें खेला गया है । आज तकनीकि सुधारों के कारण रंगमंच की दृष्टि सेस्थल की विभिन्नता दर्शाने में भी कोई कठिनाई महसूस नहीं होती ।

निष्कर्ष

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटक वातावरण-शिल्प की दृष्टि से सफल हैं । ये नाटक सामाजिक आर्थिक और राजकीय वातावरण का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने में सक्षम हैं । इन नाटकों की भाषा देश काल वातावरण तथा पात्रों के अनुकूल है । कथावस्तु का गठन वातावरण का बोध करने में सक्षम है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ - 25 ।

2 वही, पृष्ठ - 51 ।

" अशोक " और " रेवा " इतिहासकालीन वातावरण में लिखे गए होने पर भी उनमें आधुनिकता बोध दर्शाने की क्षमता है । "न्याय की रात " वातावरण सृष्टि की दृष्टि से काफी सक्षम रचना है। विवेच्य नाटकों में करूण, उल्हासित, दु:खपूर्ण तथा भयानक वातावरण घटना विशेष पर बहुत ही अनुकूल है। भाषा, परिस्थिति ,रहन-सहन, रंगमंच सज्जा तथा संकलनत्रय की दृष्टि से विवेच्य नाटक सफल बन पड़े हैं । निष्कर्ष यह कि वातावरण-शिल्प में नाटककार को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है । अतः यहकहना समीचीन ही है कि विद्यालंकार जी के नाटक वातावरण शिल्प की दृष्टि से अनुकूल ही नहीं अनूठे भी हैं ।

5.5 अभिनय-शिल्प

नाटक की रंगमंचीय प्रस्तुति में अभिनय के लिए अनन्यसाधारण महत्व है । अभिनय को छोड़कर रंगमंच की कल्पना असंभव है । पात्रों के हाव भाव, उनके क्रिया कलाप उनकी मानसिक दशाएँ वास्तव में अभिनय ही है । भारतीय आचार्यों ने अभिनय के चार प्रकार माने हैं 1.आंगिक अभिनय , 2. वाचिक अभिनय , 3. सात्विक अभिनय और 4. आहार्य अभिनय । लेकिन रंगमंच पर अभिनेता द्वारा इसका अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व देखने को नहीं मिलता तो वे एक साथ देखने को मिलते है ।क्योंकि ये एक-दूसरे के पूरक होने के कारण एक-दूसरे में धुल-मिल जाते हैं ।अभिनेता नाटक के कथ्य को अपने अभिनय के बलबूते पर दर्शकों के साम्ने जीवंत रूपमें वास्तव बनाने का प्रयास करता है ।

विद्यांलकार जी के नाटकों में स्थित पात्र भारतीय अभिनय के चारों प्रकारों के धरातल पर खरे उतरते हैं । पाठय-नाटक होने की वजह से उनके "अशोक "और "रेवा " ये नाटक रंगमंच की दृष्टि से कठिन जान पड़ते हैं, लेकिन उनके पात्रों के सृजन में अच्छे अभिनय की क्षमता पायी जाती है । प्रस्तुत नाटकों में अभिनेयता की दृष्टि से अनेक संकेत दिए हैं । जैसे -"अशोक धुमकर ,सुमन ; अशोक के कंधे पर हाथ रखकर, तिष्य सुमन की ओर देखकर , सैनिक अपने कपड़ो में से राजपट्ट निकालकर ऊँचा कर देता है, चित्रा दहाड़े मार कर रो उठती है, चण्ड़गिरी अपने जेब से एक कागज निकालकर, युवती सामने की कुर्सी पर बैठ जाती है, कमला घबराकर, यशोवर्मा अर्धस्वगत-सा कह उठते हैं, गुरूदेव भावावेश में आकर उसका हाथ पकड़ लेते हैं आदि । इस प्रकार चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटकों में प्रत्येक दृश्य में शारीरिक क्रिया व्यापार के साथ वाणी व्यापार और भावदशाओं के मंचन के लिए अवसर प्रदान किया है ।

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटकों की यह विशेषता कही जा सकती है कि अभिनेयता की दृष्टि से तथा संवादों के बीच नाटकीय कार्यव्यापारों के लिए कई अवकाश हैं । उनके पात्र मंच पर आकर केवल वार्तालाप हीनहीं करते अपितु भाव मुद्रा ,नेत्र–कटाक्ष, अंगविकास, वेश भूषा तथा संवादोंद्वारा उस प्रसंग को वास्तविकता की पृष्ठभूमि पर साकार करने की क्षमता रखते हैं डॉ. नरनारायण राय का यह कथन सही है – " खाली जगहों को अभिनयादि द्वारा भरना तभी संभव होता है,जब संवादों एवं घटनाओं के बीच अवसर उपलब्ध कराये जाए ।"[1] यहाँ पर, कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं ---

"सुमन –क्या कहा, साधारण राजकुमार । अशोक तुम जानते हो न कि तुम्हारे इस कथन का अभिप्राय क्या है ?

(अशोक कोई जवाब नहीं देता , वह आँखें नीची करके चुपचाप खड़ा रहता है)

सुमन – (भर्राई हुई आवाज में) अशोक ।

(अशोक उसी तरह चुपचाप खड़ा रहता है)

सुमन – भाई अशोक ।" [2] उसी प्रकार एक और उदाहरण देखिए --

"सुमन – (अशोक के कन्धे पर हाथ रखकर) मेरी ओर देखो अशोक ।

(इसी समय तिष्य नजदीक आकर कहता है)

तिष्य – (सुमन की ओर तक्ष्य करके) एक बात का जवाब देंगे भाई साबह ? (प्रायः साथ ही साथ) मगर इस तरह अचानक बीच में आकर बाधा डाल देने के लिए मुझे क्षमा कीजिएगा ।"[3]

इससे स्पष्ट है कि विद्यालंकार जी ने नाटक की कलात्मक सार्थकता अभिनय निर्देश देकर स्पष्ट की है। उन्होंने " रेवा " नाटक में भी सफल अभिनय संकेत देकर अपना कलात्मक दृष्टिकोण स्पष्ट कर दिया है ।यहाँ " रेवा " के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं --

"गुरूदेव –(जरा आवेश के साथ) लो, रेवा, वह क्षण अब आ पहुँचा ।

(रेवा की गम्भीरता और भी बढ़ जाती है और वृद्ध गुरूदेव भावावेश में आकर उसका हाथ पकड़ लेते हैं ।)

रेवा – (सहसा शांत होकर) मैं बहुत अधिक डर गई थी गुरूदेव ।"[4]

---

1 डॉ. नरनारायणराय – कोणार्क : रंग संवेदना, पृष्ठ– 65 ।
2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ – 8 ।
3 वही, पृष्ठ – 8–9 ।
4 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ– 16 ।

उसी प्रकार एक और उदाहरण देखिए --

" हेमंत -(राजीव से) क्षमा कीजिए । मैं अभी आया ।
(उठकर टेलिफोन के पास जाता है और रिसीवर हाथ में लेकर बात करने लगता है ।)
जी ,मैं हेमंत बोल रहा हूँ .....नमस्कार ....जी, नमस्कार ।
(रिसीवर टेलिफोन पर रखकर मुन्शी से)
आज सारी रात आपको काम करना होगा मुन्शी जी ।
मुन्शी - मुझे यों भी रात को नींद नहीं आती जी ।
(सब लोग मुस्कराते हैं ।)
(इसी समय एक ट्राली में चाय और कॉफी लाई जाती हैं और कुछ खाने की चीजें भी । उमा एक प्याले में कॉफी उँड़ेलते हुए ।)"[1]

विद्यालंकार जी के पात्रों में नाटकीय फिर भी यथार्थ और वास्तविक अभिनय करने की क्षमता है ।इसी कारण अभिनय में जीवंतता है । पात्रों के मन में उठी भाव-भावनाएँ तथा अन्तर्मन की व्यथा आदि को स्पष्ट करने की क्षमता संवादों में अभिनयद्वारा आ जाती है । अथांत अभिनयानुकूल नाटय तत्त्व विद्यालंकार जी के नाटकों में पर्याप्त पाए जाते हैं ।अभिनय एक कला है । नाटककार की अभिनय के अनुरूप पात्र-योजना बनाने की भीअपनी कला या हुनर है । विद्यालंकार जी के " न्याय की रात " का एक पात्र अभिनयकला को मध्यनजर रखते हुए तैयार किया नजर आता है । हेमंत दुनिया को ही एक नाटक के रूप में मानता है और स्वयं उसमें अभिनय करनेवाला अभिनेता । उनके शब्दों में " यह दुनिया एक नाटक ही तो है,भाई साबह मैं अपने पार्ट में जरा ओवर ऐक्टिंग कर गया ।"[2] जीवन को नाटक और स्वयं को एक एक्टर मानकर चलनेवाला हेमंत सचमुच एक अभिनयकुशल अभिनेता नजर आता हे ।

डॉ. गोविंद चातक अभिनय कला के संदर्भ में लिखते हैं " अभिनय कला में दो तत्त्वों का योग होता है -मूकाभिनय और वाणी । मूकाभिनय का संबंध हाव-भाव ,मुखाकृति,गति और क्रियाव्यापार से होता है और वाणी मुख से निस्सृत मानवीय ध्वनि की विविध विशेषताओं धनत्व,गुण और तारत्व से संबंध है ।दोनों का योग रंगमंच पर जीवन की अभिव्यक्ति करता है।"[3]

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ - 30-31 ।

2 वही, पृष्ठ - 39 ।

3 डॉ. गोविंद चातक - रंगमंच कला और दृष्टि , पृष्ठ - 41 ।

अर्थात दर्शकों के सम्मुख विषयवस्तु साक्षात रूप से अभिनयद्वारा ही प्रस्तुत की जाती है । इसी कारण नाट्य कला की दृष्टि से नाटक अभिनेय हो यह बात अपरिहार्य मानी है ।

आंगिक अभिनय का संबंध नाटक में पात्रों की घटना के अनुसार भाव-भंगिमा, विभिन्न मुद्रा, शारीरिक हलचल , क्रिया कलाप आदि से है । वाचिक अभिनय में उच्चारण , यति-गति आदि बातें आती हैं । प्रस्तुत नाटकों में आंगिक अभिनय के अनुरूप पात्रों का विकास तथा घटना घटित होती है । यहाँ वाचिक और आंगिक अभिनय का एक सुन्दर दृश्य द्रष्टव्य है --

"हेमंत – तुम बड़ी भोली हो कमला ।

कमला – (उत्तेजित होकर) पर आप मुझसे क्या चाहते है ? आपने मुझे इस आधी रात के समय इस तरह धोके से अपने घर क्यों बुलाया ?

हेमंत – उद्विग्न मत होओ कमला । अभी मैं तुम्हें सब कुछ बताता हूँ ।

कमला – (एकाएक खड़ी होकर) नहीं, मैं कुछ नहीं सुनना चाहती । मैं अपने घर जाऊँगी। मुझे घर जाने दीजिए ।

(दरवाजे की ओर बढ़ती है । हेमंत आगे बढ़कर उसकी राह रोक लेता है और अधिकार तथा ऊँचे स्वर से पुकारता है –)

हेमंत –कमला ।

(कमला सिहरकर खड़ी हो जाती है । वह कोई जवाब नहीं देती ।)

हेमंत – (उसी तरह आज्ञापूर्ण स्वर से) बैठ जाओ कमला ।

(कमला घबराकर उसी सोफा कुर्सी पर बैठ जाती है ।)

हेमंत (धमकी भरे स्वर में) यदि अब के तुमने उठने का प्रयत्न किया तो याद रखना ।"[1]

अभिनेता इस सारी आंगिक और वाचिक सृष्टि का उपयोग भावाव्यक्ति के लिए करता है । विद्यालंकार जी ने अभिनय की दृष्टि से पात्रों को निर्देश दिए है जिससे अभिनेता को उस पात्र के अनुसार उनकी शैली के अनुसार अभिनय करने में सहायता होती है ।"न्याय की रात " के कुछ पात्रों का परिचय द्रष्टव्य हैं --

" हेमंत –प्रचलित मानव – कमजोरियों से अधिकतम् लाभ उठानेवाला एक चलता-पूर्जा व्यक्ति।,

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात, पृष्ठ – 138-139 ।

मुन्शी देवराज– हेमंत का सहकारी , अत्यन्त विश्वस्त बुजुर्ग ।

राजीव – हेमंत का बहनोई , एक अत्यन्त ईमानदार भारतीय नागरिक ।

कमल – एक सुशिक्षित शरणार्थी लड़की ।

जुगलकिशोर – एक ईमानदार सुशिक्षित युवक ।"[1]

विवेच्य अभिनय विषयक संकेत जितने विस्तार से दिए हैं उतने ही विस्तार से सात्विक अभिनय विषयक संकेत भी दिए हैं । जैसे ---

"भर्राई हुई आवाज में", " जरा गम्भीर होकर ", " खुश होकर ", " जरा–सा मुस्कराकर"।"[2] " संयत भाव से ", " जरा–सा लज्जीत होकर", "सहसा शांत होकर" ।"[3] "विनय से ", " हँसती हुई" , " हाथ जोडकर", " अनुनयपूर्वक "।"[4] इस तरह विवेच्य नाटकों में सात्विक अभिनय के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध हैं । अभिनय संबंधी दिए गए सूक्ष्मातिसूक्ष्म निर्देश विद्यालंकार जी के अभिनय विषयक गहरे अध्ययन के परिचायक हैं । उन्होंने पात्रों के भावों के साथ-साथ उनकी मनःस्थितियों की तक गहराई से प्रतिष्ठापना की है । संवादों के आदि, मध्य और अंत में दिए गए इन निर्देशों से अभिनेताओं को अपनी भूमिकाएँ निभाने में तथा निर्देशक को निर्देशन में विशेष सहायता मिल जाती है । अभिनय के जरिए नाटकों में माहौल तैयार करने में नाटककार सफल हुए हैं ।

निष्कर्ष

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटक अभिनय की दृष्टि से सफल हैं । इनमें नाटककारने अभिनय की दृष्टि से प्रसंग, संवाद, भाषा, वातावरण और कथावस्तु का निर्माण कर अभिनयानुकूल माहौल तैयार किया है । प्रथम दो नाटक " अशोक " और " रेवा " ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखे गए होने के कारण मंचियता की दृष्टि से कठिन नजर आते हैं । वास्तव में नाटककार ने उनकी सृष्टि करते वक्त रंगमंच की दृष्टि से विचार नहीं किया था । उनकी निर्मिति पाठय–नाटय के रूप में की थी । किन्तु उनके नाटकों में अभिनयानुकूल चरित्र का निर्माण मिलता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ – 23 ।
2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ – 8–9 ।
3 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ– 14–15–16 ।
4 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ – 36–39–40 ।

विद्यालंकार जी का " न्याय की रात " नाटक सभी दृष्टि से योग्य और सफल है जिससे नाटककार की अभिनयसंबंधी ज्ञान की जानकारी मिलती है । प्रायः विवेच्य नाटक अभिनेय हैं ।

5.6 **भाषा–शिल्प**

भाषा–शिल्प नाटक का महत्त्वपूर्ण कारक है । नाटक सृजन के प्राथमिक काल में भाषा का इतना महत्त्व नहीं था जितना वर्तमान में है । पहले विषय वस्तु को नाटक में प्राधान्य दिया जाता था । वर्तमान परिस्थिति में भाषा नाटयसाहित्य में अपना अलग महत्त्व रखती है । भाषा के माध्यम से नाटककार दर्शक पर विशेष प्रभाव डालता है । लेखक सामान्य, सरल और सुलभ भाषा शैली द्वारा पात्रों की सामान्य से सामान्य विशेषताओं पर भी प्रकाश डाल देता है । नाटककार नाटक में विशेष प्रभाव निर्माण करने के लिए शुद्ध साहित्यिक भाषा के साथ साथ बोलचाल की भाषा, आँचल विशेष की भाषा का प्रयोग भी करता है । डॉ. सुरेश सिन्हा का यह मत द्रष्टव्य है " प्रत्येक जीवन परिवेश को अभिव्यक्त करने के लिए भाषा का अपना रूप होता है । परिवेश में परिवर्तन के साथ भाषा का स्वरूप नया हो जाता है । परिवर्तनके इन सुत्रों को न पहचान सकना अविवेकपूर्ण दुराग्रह है । जीवन परिवेश के बदल जाने पर भी जब हम उसी भाषा का प्रयोग करते रहते है तो विड़म्बनाएँ उत्पन्न होती हैं और मामूली–सा कथ्य भी अविश्वसनीय या चौंकनेवाला बन जाता है और वह हमेशा कोई रिश्ता जोड़ नहीं पाता । कथ्य जितना ही प्रामाणिक होगा भाषा उतनी ही सहज होगी ।"[1]

विवेच्य नाटकों में चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने सरल, सरस , चुस्त और प्रभावपूर्ण तथा पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है । इसके साथ–साथ उनके नाटकों में प्रतोकात्मक भाषा, काव्यात्मक भाषा, व्यंग्यात्मक भाषा, दार्शनिक विचारों से युक्त भाषा, मुहावरों , कहावतों और सुक्तियों से युक्त भाषा का प्रयोग भी हुआ है ।इसके सिवा उनके नाटकों में अरबी–फारसी, अंग्रेजी, तत्सम ,तद्भव , संस्कृत शब्दों का भी प्रयोग कम अधिक मात्रा में पाया जाता है । भाषा–शिल्प के अंतर्गत निम्नलिखित रूपों का अध्ययन आवश्यक है ।

1. शब्दप्रयोग के विभिन्न रूप, 2. भाषा सौन्दर्य के साधन

---

1 डॉ. सुरेश सिन्हा – हिंदी उपन्यास , पृष्ठ – 391–392 ।

5.6.1 **शब्द प्रयोग के विभिन्न रूप**

नाटककार विद्यालंकार जी की भाषा पात्रानुकूल , सूक्ष्म, सांकेतिक और प्रवाहपूर्ण है । इन्होंने ऐतिहासिकता के साथ-साथ देशी–विदेशी स्रोतों से विविध प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है । जैसे ----

5.6.1.1 **तत्सम शब्द**

विद्यालंकार जी के अधिकतर नाटक ऐतिहासिक कोटि के होने के कारण पात्रों की भाषा में तत्सम शब्दों का प्रयोग होना स्वाभाविक ही है । नाटककार विद्यालंकार जी ने इस बात के औचित्य का ध्यान रखते हुए अपने नाटकों में स्थान–स्थानपर तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है, जो उचित ही लगता है । " अशोक " नाटक में तत्सम शब्द इस प्रकार मिलते हैं --" पुत्र"[1], "क्षत्रिय "[2], "ध्वनि"[3] , " आकाश"[4] । " रेवा " नाटक में प्रयुक्त तत्सम शब्द इस प्रकार हैं -- " जल"[5], " शिलाखंड"[6] , " पृथ्वी" [7], "द्वीप"[8] । राजनीति पर लिखे गए सामाजिक उद्देश्यपूर्ण नाटक "न्याय की रात " में भी कम मात्रा में क्यों न हो परंतु तत्सम शब्द मिलते हैं जैस -- " नमस्कार " [9], " पिता " [10] ।

5.6.1.2 **तद्भव शब्द**

विवेच्य नाटकों में पात्रों की बोलचाल की भाषा में तद्भव शब्द भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं । " अशोक " नाटक में प्रयुक्त तद्भव शब्द इस प्रकार' के हैं -- " आग" [11], "आँख"[12]

----

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ – 50 ।
2 वही, पृष्ठ – 13 ।
3 वही, पृष्ठ – 7 ।
3 वही, पृष्ठ – 24 ।
5 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ – 9 ।
6 वही, पृष्ठ – 10 ।
7 वही, पृष्ठ – 14 ।
8 वही, पृष्ठ – 13 ।
9 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –न्याय की रात , पृष्ठ – 31 ।
10 वही, पृष्ठ – 143 ।
11 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ – 28 ।
12 वही, पृष्ठ – 8 ।

"कान"[1] आदि । " रेवा " नाटक में प्रयुक्त तद्भव शब्द इस प्रकार के हैं -- "बाल"[2] , "दूध"[3] ,"पानी"[4] आदि ।

5.6.1.3 **देशज शब्द**

विवेच्य नाटकों में कहीं-कहीं देशज शब्द भी प्रयुक्त दिखाई देते हैं । जैसे --"अशोक" नाटक में " " पचड़ा" [5] " रेवा " नाटक में " टीला " [6] " न्याय की रात " के देशज शब्द इस प्रकार के हैं - "कोकटी रंग "[7] , "आवे"[10], बास की खपचियाँ "[9] आदि ।

5.6.1.4 **विदेशी शब्द**

अरबी-फारसी -

प्रस्तुत नाटकों के कई पात्र अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोग करते हैं । ऐतिहासिक नाटक होने के कारण " अशोक " और " रेवा " नाटक में अरबी-फारसी - उर्दू शब्दों का प्रयोग खटकता है । क्योंकि सांस्कृतिक दृष्टि से ऐतिहासिक भारतीय सम्राटों के मुख से यह भाषा दोषपूर्ण लगती है । कुछ शब्द प्रस्तुत है - " सिर्फ"[10], "जिक्र"[11], "नजदीक"[12], "मौका"[13], "ख्याल"[14] "राय"[15]

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक , पृष्ठ- 7 ।
2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ - 10 ।
3 वही, पृष्ठ - 13 ।
4 वही, पृष्ठ - 20 ।
5 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक ,पृष्ठ - 113 ।
6 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -रेवा, पृष्ठ - 43 ।
7 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात, पृष्ठ - 25 ।
7 वही, पृष्ठ- 42 ।
9 वही, पृष्ठ - 45 ।
10 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -अशोक, पृष्ठ - 24 ।
11 वही, पृष्ठ - 83 ।
12 वही, पृष्ठ- 56 ।
13 वही, पृष्ठ - 26 ।
14 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -रेवा, पृष्ठ- 32 ।
15 वही, पृष्ठ - 51 ।

"कामकाज"[1], " हुजूर"[2], "शान"[4] आदि । " रेवा " में विदेशी शब्दों का कम प्रयोग है । सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर यह नाटक लिखा जाने के कारण इसमें सांस्कृतिक गाम्भीर्य और गहनता देखने को मिलती है ।

अंग्रेजी शब्द–

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटक " अशोक " और " रेवा " इतिहासप्रधान होने के कारण औचित्य की दृष्टि से उनमें अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग बिल्कुल नहीं है । मगर उनके " न्याय की रात " नाटक में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में पाया जाता हे । इसमें ज्यादातर पात्र अधुनिक एवं सुशिक्षित होने के कारण उनकी भाषा में " फाईल"[5], " रैक"[6] " टेलिफोन"[7] "कलैक्टर" [8] आदि अंग्रेजी शब्द प्रयोग का प्रयोग हुआ है ।

5.6.1.5 **अन्य शब्द**

भाषा में सहज स्वाभाविकता , सुन्दरता तथा अनुकूलता लाने की दृष्टि से लेखक ने अन्य अनेक प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है जिसके कारण भाषा प्रभावपूर्ण एवं प्रवाहपूर्ण बन पड़ी है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ –30 ।

2 वही, पृष्ठ – 30 ।

3 वही, पृष्ठ – 32 ।

4 वही, पृष्ठ – 33 ।

5 वही, पृष्ठ – 25 ।

6 वही, पृष्ठ – 25 ।

7 वही, पृष्ठ – 46 ।

8 वही, पृष्ठ – 27 ।

5.6.1.5.1 **ध्वन्यार्थ व्यंजक शब्द**

विवेच्य नाटकों में ध्वन्यार्थ व्यंजक शब्दों का प्रयोग भी प्राप्त होता है ।जैसे - "चिल्लाना"[1], " हर्षध्वनि"[2], "विकट हंसी"[3], " खिलखिलाकर हँसना"[4], "मैना का गाना"[5], "टन का बजना"[6], " हः हः हः" [7], आदि । इसी प्रकार के ध्वन्यात्मक शब्दों के प्रयोग के कारण भाषा में गम्भीरता , अनुकूलता और प्रभावपूर्णता नजर आती है ।

5.6.1.5.2 **अपशब्द**

विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों में अपशब्दों का प्रयोग बहुत कम मात्रा में किया है । वह भी सिर्फ " न्याय की रात " में पाया जाता है । हेमंत जैसे कठोर पाषाणहृदयी चरित्र के मुख से " नॉनसेन्स"[8], " हरामखोर" [9], " बेईमान"[10], " सैतान" [11] जैसे शब्दों का प्रयोग असंगत नहीं बल्कि योग्य ही लगता है जिसके कारण भाषा में तेज धार आ जाती है । इनका प्रयोग उसके चरित्र के अनुकूल ही प्रतीत होता है । "अशोक " और "रेवा" नाटक की भाषा संवेदनशील चरित्र के मुख से निकलनेवाली मृदु और आकर्षक है ।

5.6.1.5.3 **द्विरूक्त शब्द**

भाषा के सौन्दर्य में अभिवृद्धि लाने के लिए द्विरूक्त शब्दों का प्रयोग किया जाता है किन्तु इनकी ज्यादती से भाषा प्रवाह में बाधा भी पहुँच सकती है । लेखक ने कहीं-कहीं ऐसे

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक, पृष्ठ - 10 ।

2 वही, पृष्ठ- 20 ।

3 वही, पृष्ठ - 27 ।

4 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ- 38 ।

5 वही, पृष्ठ- 177 ।

6 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ - 26 ।

7 वही, पृष्ठ - 53 ।

8 वही, पृष्ठ - 48 ।

9 वही, पृष्ठ-53 ।

10 वही, पृष्ठ-94 ।

11 वही, पृष्ठ-94 ।

शब्दों का प्रयोग भाषा को सहज , प्रवाहपूर्ण और स्वाभाविक बनाने के लिए किया हुआ प्रतीत होता है । कुछ शब्द द्रष्टव्य हैं -- " सच-सच"[1], " अभी-अभी"[2], " घने-घने"[3], "सुन्दर-सुन्दर"[4], " छोटे-छोटे "[5], "शुरू-शुरू"[6], "धीरे-धीरे"[7] आदि ।

5.6.2 **भाषा सौन्दर्य के साधन**

किसी भी रचना की सार्थकता उसमें व्यक्त विचार और भावों को सहज, सुन्दर और आकर्षक ढंग से अभिव्यक्त करने में होती है । नाटककार अपनी अभिव्यक्ति को सुन्दर और आकर्षक बनाने के लिए भाषा के विभिन्न उपकरणों का प्रयोग करते आये हैं । अलंकारिक भाषा, आवेशात्मक भाषा, सहज स्वाभाविक-पात्रानुकूल भाषा, व्यंग्यपूर्ण भाषा, मुहावरें कहावतें तथा सुक्तियाँ आदि भाषा में सौन्दर्य लाते हैं । विद्यालंकार जी के नाटकों में कुछ प्रमुख उपकरण सार्थकता के साथ प्रयुक्त हुए हैं ।

5.6.2.1 **अलंकारिक भाषा**

नाटककारने अपनी अभिव्यक्ति को अधिक आकर्षक बनाने के लिए अलंकारिक भाषा का प्रयोग किया हुआ दिखाई देता है। इसमें उपमा, अनुप्रास, रूपक आदि अलंकारों के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान की है । विशेषण का प्रयोग भी पर्याप्त मात्रा में है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -अशोक, पृष्ठ- 59 ।

2 वही, पृष्ठ- 66 ।

3 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - रेवा, पृष्ठ- 10 ।

4 वही, पृष्ठ - 15 ।

5 वही, पृष्ठ- 29 ।

6 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ- 87 ।

7 वही, पृष्ठ- 90 ।

विशेषण–

विद्यालंकार जी के नाटकों में प्रयुक्त विशेषण का प्रयोग इस प्रकार है –" गुलाबी – किरणे"[1], " तेज आँधी"[2], " भयानक रात"[3], " भयंकर हत्याकांड"[4], " दुर्गम पहाड़ी "[5], – "सुशीतल वायु "[6], " चुस्त ब्लाऊज"[7], "ऊँचा स्वर"[8], " अगाध विश्वास"[9] आदि ।

रूपक–

लेखक ने कुछ स्थानों पर रूपकों का भी सहारा लिया है जिससे नाटक की भाषा सशक्त जान पड़ती है । कुछ रूपक द्रष्टव्य हैं –– " मेरे हृदय में दो विभिन्न भावों के तूफान से उठ खड़े हुए हैं । एक अनुभूति आग के लपटों के समान गरम है और दूसरी वर्षा की बौछार के समान शीतल ।"[10], उसी प्रकार "शीला स्थल पर फेंकी गई मछली के समान तड़प उठती है ।"[11] "बालों की लटाएँ हवा में उड़–उड़ कर ऐसी प्रतीत होती हैं जैसे रेवा ने अपने सिर पर बहुत से साँप लटका रखे हो ।"[12]

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ– 23 ।

2 वही, पृष्ठ–39 ।

3 वही, पृष्ठ– 114 ।

4 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ–55 ।

5 वही, पृष्ठ–59 ।

6 वही, पृष्ठ– 91 ।

7 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –न्याय की रात , पृष्ठ–28 ।

8 वही, पृष्ठ–138 ।

9 वही, पृष्ठ– 89 ।

10 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ– 30 ।

11 वही, पृष्ठ– 76 ।

12 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ– 10 ।

अनुप्रास–

"चण्ड़गिरी भाग गया है, मगर वे लोग मौजूद हैं जिन्होंने चण्ड़गिरी को चण्ड़गिरी बनाया था । एक चण्ड़गिरी चला गया तो उसकी जगह वे दूसरा चण्ड़गिरी भेज देंगे ।"[1], " पाटलिपुत्र की सुशिक्षित सेना का सामना संसार के और किस देश की सेना कर सकती है ?"[2] आशाद्वीप के समान संपन्न , सुसंस्कृत और सुखी द्वीप इस धरती पर दूसरा नहीं है ।"[3]

इस प्रकार के अलंकारिक भाषा के कारण नाटक बहुत ही आकर्षक एवं सुन्दर बन पड़े हैं ।

5.6.2.2 मुहावरों-कहावतों से युक्त भाषा

भाषा को सजीव और प्रभावशाली बनाने के लिए तथा भाषा में मार्मिकता लाने के लिए मुहावरों-कहावतों का प्रयोग भी किया जाता हैं । विद्यालंकार जी के नाटकों में मुहावरों-कहावतों का प्रयोग ज्यादा मात्रा में नहीं मिलता लेकिन कुछ स्थानों पर मुहावरों-कहावतों का प्रयोग अवश्य देखने को मिलता है । जैसे -----

"मगर कान ऐंठने के लिए भी तुम्हारा वहाँ जाना जरूरी है न ? "[4], " चित्रा दहाड़े मार कर रो उठती है ।"[5], " जरा बाहर जाकर देखो कि यह " अतीव सुन्दर लड़की हमारे काम की है या नहीं । यदि काम की हो तो उसे भीतर ले जाओ । और काम की न हो तो उसे वहीं से टरका दो ।"[6], " मशहूर है न, मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक ।"[7] आदि मुहावरेंदार भाषा शैली का प्रयोग विवेच्य नाटकों में है,इसके साथ ही कुछ कहावतों के उदाहरण भी द्रष्टव्य हैं -- " कोयले की दलाली में हाथ काले होते ही हैं ।"[8] इसी प्रकार " तुम्हें आम खाने से मतलब है कि

----

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ–11 ।

2 वही, पृष्ठ– 55 ।

3 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ–13 ।

4 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ– 7 ।

5 वही, पृष्ठ– 48 ।

6 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –न्याय की रात , पृष्ठ–42 ।

7 वही, पृष्ठ– 84 ।

8 वही, पृष्ठ– 34 ।

पेड गिनने से ।"[1] , "कहते है न, नौ सौ चूहे खाय के बिल्ली चली हज को ।"[2] आदि । इसके साथ-साथ अनेक सुक्तियों का प्रयोग भी हुआ है । जैसे ---" देवो न जानाति कुतो मनुष्य"[3] "विषस्य विषमौषधम् ।"[4], " कण्टकेनैव कण्टकम् ।"[5]

जीवन के अनुभवगत सत्यों को इन सूक्तियों के रूप में रखा है । ये सूक्तियाँ चरित्र की अपनी अलग पहचान कराती हैं । संस्कृत भाषा की ये सभी सुक्तियाँ ज्यों की त्यों लेकर नाटककार ने यथायोग्य स्थान पर कौशल के साथ प्रयोग किया है ।

5·6·2·3 **दार्शनिक भाषा**

विद्यालंकार जी के नाटक ऐतिहासिक , सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर लिखे होने के कारण उसी उद्‌देश्य की पूर्ति के अनुसार दार्शनिक भाषा के प्रयोग उनमें प्रचुर मात्रा में देखने को मिलते हैं । " अशोक " नाटक में आचार्य उपगुप्त के मुख से दार्शनिक भाषा का प्रयोग हुआ है । उनके शब्दों में " छल–कपट और हत्या से भरी दुनिया का स्वयं भी एक पूर्जा बन जाने में आनन्द कोई नहीं है । इस तरह हत्या और अपहरण करके व्यक्ति अपने को और भी अधिक छोटा और भी अधिक कायर और भी अधिक दुःखी बना लेता है । यह मार्ग शांति का नहीं है शीला । भगवान तथागत का उपदेश है कि अपने को दूसरे में पहचानो इसीसे तुम्हें शांति प्राप्त होगी ।"[6], " रेवा " नाटक में आचार्य ऋषि पुण्ड़रीक के मुख से दार्शनिक भाषा अत्यंत आकर्षक बन पड़ी है ऋषि पुण्डरीक के शब्दों में "मैं मानता हूँ कि साधारण दशाओं में लड़ना-भिड़ना अच्छी चीज नहीं

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ– 47 ।

2 वही, पृष्ठ– 125 ।

3 वही, पृष्ठ– 85 ।

4 वही, पृष्ठ– 107 ।

5 वही, पृष्ठ – 107 ।

6 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ– 86 ।

है । परन्तु ऐसी परिस्थिति भी आ सकती है, जब शांत रहना और अत्याचार सहना संसार का निकृष्टतम् पाप बन जाता है और शस्त्र लेकर आततायी का विध्वंस कर देना नहान पुण्य का कारण हो जाता है ।"[1]

5.6.2.4 **पात्रानुकूल भाषा**

विद्यालंकार जी ने पात्र के चरित्र, व्यक्तित्व तथा परिवेश के अनुसार भाषा का प्रयोग किया है । उन्होंने देहाती अशिक्षित पात्र के मुख से बोलचाल की भाषा और सुसंस्कृत ,सभ्य, सुशिक्षित पात्र के मुख से परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग कर अपनी भाषा की क्षमता स्पष्ट कर दी है । " न्याय की रात " में चपरासी के मुख से बोलचाल की भाषा का प्रयोग है " चपरासी –फैसन–वैसन तो नाय । पर अतीव सुन्दर । मुल देख लेई हुजूर हुकुम होई तो भीतर लै आवै।"[2] इसी नाटक में सुशिक्षित बिजनैसमन हेमंत की भाषा पात्रानुकूल साबित होती है । देखिए –– "हेमंत – आप भी एक जीनियस है मुन्शी जी । मैं तम्बाकु की एक कंपनी का मैनेजिंग डाइरेक्टर हूँ । इससे आपने इन बेईमान सरकारी अफसरों का हिसाब रखने के लिए उनका नाम ही " कच्चा तम्बाकु " रखकर यह रजिस्टर खोल दिया है । क्या खूब नाम रखा है, आपने । हः हः हः । कच्चा तम्बाकु । ये हरामखोर , बेईमान सरकारी अफसर सचमुच कच्चे तम्बाकु हैं । हः हः हः।"[3] यह भाषा नाटकीय भाषा की कसौटी पर भी खरी उतरती है । इसके साथ ही यह प्रतीकात्मक भाषा का भी एक अच्छा खासा उदाहरण है । इस नाटक में सदानंद भ्रष्टाचार का प्रतीक है, इसलिए उसका नाम " अखिल भारतीय तम्बाकु "[4] की सूची में रखा है। क्योंकि वह पूरे हिन्दुस्तान में फैला है ।

5.6.2.5 **वर्णनात्मक भाषा शैली**

विवेच्य नाटकों में वर्णनात्मक भाषा–शैली का भी प्रयोग किया है । "रेवा " नाटक की इन्दिरा एक प्राचीन मन्दिर का वर्णन करती हुई कहती है " देखिए हमारे देश से हजारों कोस दूर,

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ–45–46 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकर – न्याय की रात , पृष्ठ–42 ।

3 वही, पृष्ठ– 53 ।

4 वही, पृष्ठ– 54 ।

इस कुमारीद्वीप में आर्य भवन निर्माण कला के ये प्राचीन मंदिर कितने सुन्दर प्रतीत होते है । वह सामने का मेहराबदार ऊँचा गुम्बद देखा आपने ? जैसे पर्वत की एक बड़ी शिला को काटकर इस गुम्बद का निर्माण किया गया हो ।"[1] " अशोक " नाटक में दूत पाटलिपुत्र की वर्तमान घटना का वर्णन करते हुए कहता है " राजकुमार अशोक पाटलिपुत्र के चारों ओर घेरे डालकर पड़े हुए थे । नगर के सभी द्वार बन्द थे । नागरिकों में इतना गहरा रोष था कि वह रोष पाटलिपुत्र के इतिहास में अदृष्टपूर्व है। पाटलिपुत्र के नगरभवन के सम्मुख राजकुमार अशोक की जो प्रस्तर मूर्ति है, उस पर एक रात में कम से कम एक लाख जूते पड़े होंगे । उस मूर्ति का नाक–मुँह सभी कुछ जूतों की इस निरन्तर मार से घिस गया है ।"[2]

इसके साथ ही काव्यात्मक भाषा–शैली " अशोक" और " रेवा " नाटक में पायी जाती है तो व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग " न्याय की रात " में पाया जाता है ।

निष्कर्ष

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटक भाषा–शिल्प की दृष्टि से सफल बन पड़े हैं । विवेच्य नाटकों की भाषा नाट्यानुकूल है । इसमें भाषा–शिल्प की दृष्टि से पात्रानुकूल भाषा, व्यंग्यात्मक भाषा, प्रतीकात्मक भाषा , वर्णनात्मक भाषा, मुहावरें – कहावतों और सुक्तियों से युक्त भाषा तथा काव्यात्मक भाषा–शैली का प्रयोग बहुत ही सफल और बड़े ही कौशल के साथ किया है । नाटककारने अरबी, फारसी तथा उर्दू शब्दों का भी प्रयोग किया है जो ऐतिहासिक नाटक " अशोक " और " रेवा " में खटकता है, फिर भी इसका प्रयोग ज्यादा नहीं है ।

"न्याय की रात " में आधुनिक , सुशिक्षित पात्रों की ओर से अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग भी हुआ है । विवेच्य नाटकों में दार्शनिक तथा सूक्तिमय भाषा प्रयोग भी प्राप्त हैं । भाषा का निर्वाह देश–काल–वातावरण के अनुरूप और चरित्रगत विशेषता के अनुकूल हुआ है । निष्कर्ष यह कि भाषा–शिल्पकी दृष्टि से विवेच्य नाटक सफल ही जान पड़ते हैं ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ– 134 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक ,पृष्ठ– 52 ।

5.7 रंगमंच-शिल्प

रंगमंच नाट्यसाहित्य की प्रयोगशाला है जिसमें नाटक की अपनी कसौटी होती है । रंगमंच की सफलता असफलता पर ही नाटक की लोकप्रियता निर्भर करती है । रंगमंच पर नाटक की अभिनय क्षमता को लेकर उसकी सफलता को परखा जा सकता है । जो नाटक रंगमंच पर अभिनय की कसौटी पर खरा नहीं उतरता नाट्यमर्मज्ञ और रंगकर्मी उसे नाटक तक मानने को तैयार नहीं होते । पर यह बात गलत है, क्योंकि हर नाटक की अपनी-अपनी क्षमता होती है । इसी कारण तो मंचीयता के आधार पर नाटक के सफल नाटक, अच्छा नाटक, मध्यम नाटक और असफल नाटक आदि प्रकार हैं । यह बात आवश्यक है कि नाटक की रचना करते समय रंगमंच और अभिनय की सभी संभावनाओं की ओर पूर्णतः ध्यान रखकर उसका सृजन किया जाए, बाद में उसकी सफलता असफलता नाटककार की अपनी कसौटी है, अपनी शैली है । कुछ नाटक अभिनेयता की पूरी क्षमता हुए भी रंगमंच पर किसी दूसरे कारण से असफल हो सकता हैं । इसी कारण नाटक में अभिनय प्रमुख है ही मगर उसकी असफलता उसे नाटक न कहने के लिए बाध्य करे यह नहीं हो सकता । उसकी अभिनय क्षमता कम है यह बात ठीक है। अभिनय क्षमता नाटक के संवाद ,भाषा-शैली और अभिनेता पर निर्भर है । कुछ नाटकों के संवाद, भाषा शैली आदि योग्य होकर भी अभिनेता की असफलता नाटक की असफलता बन जाती है । इसी वजह से उसे नाटक न कहना गलत होगा । अभिनय में असफल नाटक रंगमंच पर असफल बन जाते हैं ।

हमने विद्यालंकार जी के नाटकों की शिल्पविधि के अंतर्गत अभिनय शिल्प का अध्ययन किया है अभिनय की दृष्टि से उनके नाटक प्रभावपूर्ण और सफल रहे हैं । अभिनय शिल्प के साथ-साथ रंगमंच में अन्य बातों का भी विचार किया जाता है । और इनमें है, निर्देशन एवं मंचव्यवस्थापन, रूपसज्जा , दृश्यसज्जा, प्रकाशयोजना, ध्वनि एवं संगीत संयोजन आदि ।

5.7.1 निर्देशन एवं मचव्यवस्थापन

रंगमंच का विचार करने पर यह बात स्पष्ट होती है कि नाटक खेलने के लिए निर्देशन और मंचव्यवस्थापन का बड़ी कुशलता के साथ आयोजन करना चाहिए । विद्यालंकार जी के अब तक के प्रकाशित नाटकों में रंगमंच की दृष्टि से " न्याय की रात " नाटक बड़ा ही सफल बन पड़ा है । उनके अनुसार "अशोक " और " रेवा " का तो उन्होंने रंगमंच की दृष्टि से सृजन नहीं

किया था । इस संदर्भ में वे लिखते हैं "सबसे पूर्व मैंने " अशोक " और " रेवा " नाम से जो नाटक लिखे थे वे रंगमंच के लिए नहीं थे ।"[1] परंतु " न्याय की रात " नाटक रंगमंच के लिए लिखा गया है । रंगमंच संबंधी उतने ही निर्देश इस नाटक में दिए गए हैं , जितने आवश्यक थे । प्रस्तुत नाटक पहली बार श्री. सोंधी के निर्देशन में लाहौर के सुप्रसिद्ध ओपन एअर थिएटर में अभिनीत हुआ था इसके संबंध में स्वयं लेखक नाटक की भूमिका में लिखते हैं " रंगमंच संबंधी अपने यत्किंचित व्यावहारिक ज्ञान और अनुभव के लिए मैं पंजाब ड्रामा लीग के मुख्य निर्देशन प्रिन्सिपल श्री. गुरूदत्त सोंधी तथा लिटिल थिएटर ग्रूप ,नई दिल्ली के कला-निर्देशक श्री. इंद्रलालदास का कृतज्ञ हूँ । श्री. सोंधी के निर्देशन में ही मेरा पहला नाटक पूरी तैयारी के साथ लाहौर के सुप्रसिद्ध ओपन एअर थिएटर में अभिनीत हुआ था ।"[2] स्पष्ट है कि नाटक को मंचीत करने हेतु निर्देशन एवं मंचव्यवस्थापन का महत्त्वपूर्ण स्थान है और उसके लिए सफल निर्देशक का होना भी अत्यावश्यक है ।

5.7.2 **रूप सज्जा**

नाटक में मंच की दृष्टि से रूपसज्जा और वेशभूषा विषयक संकेत महत्वपूर्ण हैं । रूपसज्जा के बारे में डॉ. गोविंद चातक का मत द्रष्टव्य है कि " वेशभूषा मंच पर एक वातावरण निर्माण करती है । उसका सबसे बड़ा उद्देश्य एक ओर पात्र की प्रतीती करानी होती है , तो दूसरी ओर नाटक की व्याख्या । व्याख्या से तात्पर्य यह है कि वेशभूषा के माध्यम से ही प्रेक्षक पात्र के देश काल वातावरण,अवस्था,आर्थिकस्तर मनोविज्ञान आदि के संबंध में अपना एक बिम्ब बनाता हैं ।"[3]

विवेच्य नाटकों में रूप सज्जा के संकेत पर्याप्त हैं । "अशोक " के पहले अंक के पहले दृश्य में " सायंकाल का समय,युवराज सुमन अपने दोनों भाइयों ,अशोक तथा तिष्य के साथ सायंकाल की पोशाक पहने हुए राजप्रसाद के उद्यान में खड़े हैं ।"[4] इसी नाटक के पाँचवें अंक

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ- 19 ।

2 वही, पृष्ठ- 19 ।

3 डॉ. गोविंद चातक - रंगमंच : कला और दृष्टि , पृष्ठ- 56 ।

4 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक, पृष्ठ- 7 ।

के सातवें दृश्य में " शीला बौद्ध भिक्षुओं के पीले वस्त्र पहन कर सदा के लिए सीमाप्रांत की ओर प्रस्थान कर रही है ।"[1] " रेवा " नाटक के अंतर्गत रूपसज्जा के बारे में पहले अंक के प्रथम दृश्य में संकेत मिलता है जो इस प्रकार का है "राजकुमारी रेवा बैठी है । उसके शरीर पर उजले रेशम का एक लम्बा वस्त्र है । राजकुमारी ने अपने अत्यन्त काले और खूब लम्बे बालों के पिछले भाग को नागों की–सी बहुत–सी लटाओं में पृथक–पृथक बाँध रखा है । उड़–उड़ कर ऐसी प्रतीत होती हैं जैसे रेवा ने अपने सिर पर बहुत से साँप लटका रक्खे हो ।" [2]

"रेवा " में प्रथम अंक का दूसरा दृश्य देखिए " चोलराज की कन्या इन्दिरा पूर्व की ओर मुँह किए खड़ी है। उसकी पीठ पर अत्यंत लम्बे घने और काले बाल बिखरे हुए हैं ।इन्दिरा के सम्मुख अपना–अपना सामानलिए बहुत–से श्वेत वस्त्रधारी व्यक्ति खड़े हैं ।"[3] इसी नाटक के द्वितीय अंक के तीसरे दृश्य में देश काल वातावरण के अनुसार रूप सज्जा बना दी है " सेनापति श्रीदेव के वस्त्रों पर खून लगा हुआ है । बाई भुजा के ऊपर तलवार का निशान साफ दिखाई पड़ता है, जहाँ वस्त्र कट गए हैं और बहुत–सा खून निकलकर कपड़ो पर जम गया है । कमर में म्यान लटक रही है और पीठ पर ढाल ।एक खुली तलवार उनके दाहिने हाथ में है । प्रतीत होता है कि उन्हें युद्धक्षेत्र से वापस आए अधिक समय नहीं हुआ । उनके सिर पर शिरस्त्राण है और पैरों में मोटी–मोटी चट्टियाँ ।"[4]

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने " न्याय की रात " नाटक के प्रथम अंक में चरित्रकी स्थिति दर्शक वेशभूषा संबंधी रूपसज्जा का निर्माण किया है । दाढ़ी मूछों तक का समग्र विचार किया गया है । " न्याय की रात " के प्रथम अंक में देखिए " हेमंतकुमार की आयु 40 के लगभग है, चेहरा भरा हुआ और उस पर तराशी हुई मूछें । उसने तंग पाजामें पर बंद गले का कोकटी रंग का कोट पहना हुआ है । मुन्शी देवराज की उम्र 50 से ऊपर है । बड़ी–बड़ी और सँभालकर रखी हुई मूछे हैं, आँखों पर चाँदी का चश्मा है, सिर पर बड़ी पगड़ी जिसमें से सफेद काले बाल बाहर झांक रहे हैं ।शरीर पतला और लम्बा है । पाजामें के ऊपर खुले कुर्तेपर वह काली वास्कट पहने हुए हैं ।"[5]

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ– 124
2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ– 10 ।
3 वही, पृष्ठ– 21 ।
4 वही, पृष्ठ– 57 ।
5 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –न्याय की रात , पृष्ठ– 25–26 ।

विद्यालंकार जी ने रूपसज्जा में वेशभूषा , केशभूषा, रंगभूषा आदि पर काफी ध्यान दिया है । चरित्र की स्थिति दर्शक वेशभूषा , वस्त्रों के रंग से शुभ-अशुभ , सुख-दुःख , जय-पराजय, विचार मतमतांतरों के बोध सूचक सफेद,लाल,पिले रंग आदि का निर्देश वातावरण निर्मिति करने में सफल है । स्पष्ट है कि रूप सज्जा के यथास्थान , यथोचित संकेत देकर विद्यालंकार जी ने अपने मंचीय तंत्र के ज्ञानका परिचय दिया है।

5.7.3 दृश्य सज्जा

दृश्यसज्जा से नाटककार अभिनेता के लिए आवश्यक वातावरण की निर्मिति करता है । स्थल काल वातावरण के अनुरूप दृश्य योजना बनाने से मंच पर देश काल का सत्याभाव प्रस्तुत किया जाता है। मंचीय आकार प्रकार दृश्यसज्जा की कला पर निर्भर होता है । नाटककार द्वारा वर्णित घटनाओं की दृष्टि से अपेक्षित वातावरण दृश्यविधान है । नाटककार विद्यालंकार जी ने " अशोक " नाटक को पाँच अंकों में विभाजित किया है । प्रत्येक अंक में सात दृश्य विधाओं का चयन किया है जिससे घटनाओं की दृष्टि से वातावरण ,स्थल,काल का निर्देश तथा अभिनेता के लिए वातावरण की निर्मिति हो सके । प्रत्येक दृश्य के आरंभ में यथास्थान संकेत दिये हैं । कहीं कहीं दृश्यान्तर का भी प्रयोग किया है। " अशोक "नाटक के पहले दृश्य में स्थान पाटलिपुत्र का है, समय सायंकाल का और "युवराज सुमन अपने दोनों भाइयों अशोक तथा तिष्य के साथ सायंकाल की पोशाक पहने हुए राजप्रसाद के उद्यान में खड़े हैं । नगर के मंदिरों में आरती हो रही है और उसकी हल्की-हल्की आवाज राजकुमारों के कानों में पड़ रही है।"[1] इस प्रकार की दृश्य सज्जा है । दूसरे अंक के प्रथम दृश्य में स्थान वैशाली प्रान्त में आचार्य उपगुप्त का आश्रम है और समय प्रभात का है । कुछ बौद्ध भिक्षु गा रहे हैं,एक अन्धा बालक भी इन भिक्षुओं में है, आचार्य उपगुप्तशांत भाव से यह गीत सुन रहे हैं " गीत -खोल बन्धु । हृदय द्वार प्रेम किरण आई ।"[2] इस प्रकार प्रत्येक अंक के दृश्य आरंभ होने पर नाटककार ने संकेत किये हैं जिससे मंच व्यव्यस्थापन में दृश्यसज्जा की निर्मिति होकर नाटक आगे बढ़ता रहता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - अशोक, पृष्ठ- 7 ।

2 वही, पृष्ठ5 32 ।

"रेवा" नाटक पाँच अंकों में विभाजित है । इस नाटक में प्रथम "अशोक" नाटक के समान दृश्य विभाजन नहीं है । प्रत्येक अंक में कम–ज्यादा दृश्य विधान है । उसमें क्रमशः दृश्य विभाजन इस प्रकार है – प्रथम अंक में तीन दृश्य, द्वितीय अंक में चार दृश्य , तृतीय अंक में पाँच दृश्य , चतुर्थ अंक में पाँच और अंतिम पाँचवें अंक में पाँच दृश्य हैं । "रेवा " के प्रथम अंक का पहला दृश्य इस प्रकार है " देश– अशाद्वीप ,स्थान– राजमहलों के निकट एक सामुद्रिक पहाड़ी पर स्थित शिवमंदिर , समय – सांझ । समुद्र में तूफान आया हुआ है । हवा तेजी से चल रही है । शिव–मंदिर एक छोटी–सी सामुद्रिक पहाड़ी की चोटी पर स्थित है । समुद्र की बड़ी–बड़ी लहरें ..... असीम आतंक–सा भरा हुआ प्रतीत होता है । दो–एक क्षणों की चुप्पी के बाद रेवा सहसा पूछ उठती है ।"[1] इस प्रकार के दृश्य बंध भी अन्य प्रत्येक अंकों के दृश्यों में स्थान–स्थान पर दिए हैं ।

"न्याय की रात " नाटक तीन अंकों में विभाजित है । उसमें अंक के प्रारंभ में दृश्य बंध दिए हैं । मगर इस नाटक के किसी भी अंक के अंतर्गत दृश्य परिवर्तन नहीं है । अंक के बदलने पर ही दृश्य बदल जाते हैं ।इसमें दृश्यसज्जा के संकेत बड़े ही विस्तृत और बारीकी के साथ दिए हैं । दूसरे अंक की दृश्य सज्जा देखिए " स्थान – सदानंद का दफ्तर, समय – सांझ, सदानंद का कमरा बड़े साहबों के कमरों की तरह सजा है । कमरे में कालीन पर तिरछे रूप में एक बड़ी मेज पड़ी है, जिसके सामने तीन कुर्सियां रक्खी हैं । पीछे की दीवार पर एक घड़ी लटक रही है । कमरे में 2,3 चित्र हैं, जो स्पष्टतः विभिन्न रूचि के हैं । दूसरे किनारे कुछ बड़े रैंक रक्खे हैं और उन्हीं के साथ एक ओर रेडियोग्राम पड़ा है । सदानंद बन्द गले का सफेद खद्दर का कोट पहने हुए है । जब पर्दा उठता है तो घण्टी का बटन दबाते हुए दिखाई देता है । घण्टी की तेज आवाज दूर तक सुनाई दे रही है ।"[2]

इस प्रकार विद्यालंकार जी के नाटकों में दृश्य सज्जा का यथोचित ध्यान रखा गया है । दृश्य सज्जा में घटना, स्थान, वातावरण तथा समय आदि का संयोजन सुचारू रूप से किया हुआ परिलक्षित होता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ– 9–10 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ– 68 ।

5.7.4 **प्रकाश योजना**

प्रकाश योजना के कारण वेशभूषा , मंचीय साज सज्जा , ध्वनि, दृश्य तथा प्रस्तुति के प्रयोग आदि में परिवर्तन देखने को मिलता है । प्रकाश मंचीय योजना को दर्शनीय बनाता है । प्रकाश स्थल काल और समय सूचक भी है । आज तंत्रज्ञान ने काफी प्रगति की है इसीसे साइक्लोरामा के माध्यम से रंगमंच पर सूर्योदय , सूर्यास्त, आँधी, तूफान आदि सभी को स्लाईड की इफेक्ट प्रोजेक्ट की सहायता से दिखाया जाता है । आज ऐसे मंच भी बन गए हैं , जहाँ फिल्म की सहायता से उपयुक्त सज्जा और पृष्ठभूमि देकर दृश्य को साकार किया जाता है । बिन्दुप्रकाश से (स्पॉट लाईट) आलोकित दृश्य के एक पूरे भाग को दिखाया जा सकता है ।इसी कारण आज असफल नाटक भी मंच पर आधुनिक प्रकाश योजना और तंत्र निर्देशन से बहुत सफलता के साथ मंचित किए जा रहे हैं ।

प्रकाश योजना के माध्यम से एक ही दृश्यबंध में मंच के विभिन्न भागों और पृष्ठभूमियों पर अनेक दृश्यों की योजना संभव हो सकती है । दर्शक रंगमंचीय प्रकाश–व्यवस्था से आत्यंतिक प्रभावित होता जा रहा है । इसलिए आज प्रकाश योजना की सहायता से नाटकीय प्रयोग नये भावबोध में बँधकर विकास की चरम सीमा को छूने लगे हैं । अभिनय एवं पात्रों के क्रियाकलापों को अभिव्यक्त करने के लिए पात्रों के उद्दीपन भावों को दिखाने के लिए प्रकाश व्यवस्था का प्रयोग किया जाता है । जब विवेच्य नाटक लिखे गये थे तब हिंदी का रंगमंच इतना ऊँचाईयों पर नहीं पहुँचा था, लेकिन आज वे ही नाटक प्रकाश योजना के बल पर सफल साबित होते हैं । लेखक ने अपने प्रथम नाटक " अशोक " और " रेवा " को पाठय नाटक के रूप में ही लिखा था ।इनके बाद का लिखा गया " न्याय की रात " सभी दृष्टि से परिपूर्ण नाटक है । इसमें भलिभाँति दृश्य, मंचीय सज्जा, ध्वनि आदि के संकेत दिए हैं ।

तीन अंक और तीन दृश्य में विभाजित " न्याय की रात " में नाटककार ने अंधःकार और प्रकाश योजना का प्रयोग दृश्य–अंक परिवर्तन के लिए किया है । समय सूचक शब्दोंद्वारा संकेत देकर वातावरण निर्माण हेतु प्रकाश संयोजन का प्रयोग किया है " साढ़े पाँच बज बए मुन्शी जी। दीवार की घड़ी साढ़े पाँच का एक "टन" बजाती है ।'[1] इसी तरह " हेमंत आगे बढ़कर दरवाजा खोलता है । दरवाजा खुलते ही बिजली की तेज चमक का प्रकाश दिखाई देता है ।इसी चमक मे राजीव का प्रवेश ।"[2] इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रकाश योजना का दृश्य प्रयोजन के लिए सार्थक

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – न्याय की रात , पृष्ठ– 26 ।

2 वही, पृष्ठ– 112 ।

उपयोग किया है ।

5.7.5 ध्वनिएवं संगीत संयोजन

नाटक में ध्वनि एवं संगीत का प्रयोग घटना या प्रसंग में जीवंतता, सजीवता, कार्यशीलता दिखाने हेतु तथा उनका प्रभाव बढ़ाने हेतु एवं नाटक की गति दर्शाने हेतु किया जाता है । ध्वनि और संगीत के कारण नाटक में स्थापित विषमता और विसंगति खत्म होकर नाटक नें एक सुचारू स्थिति पैदा होती है । नाटककार या निर्देशक यह संगीत कभी नेपथ्य में तो कभी मंच पर देता है । नाटक को और भीअधिक प्रभावमयी और नाटकीय घटनाओं में विश्वसनीयता बढ़ाने हेतु विभिन्न प्राकृतिक और अप्राकृतिक ध्वनियों का प्रयोग किया जाता है । यह प्रकाश की तरह स्थल–काल की सूचना के साथ घटना , प्रसंग की भयानकता तथा पात्रों की मानसिक अवस्था को दर्शाने में सफल होता है ।

विद्यालंकार जी ने प्राकृतिक तथा यांत्रिक भौतिक ध्वनि संकेतों का आयोजन अपने नाटकों में आवश्यकता के अनुसार किया है । जैसे – " अशोक " में " चांदनी रात है, कुमारी शीला वीणा बजा रही है । कुछ देर तक इस वाद्य यंत्रको चुपचाप बजाते रहने के बाद वह सहसा गाने लगती है ।"[1] इसके साथ-साथ नाटक को प्रभावशाली बनाने हेतु कुछ स्थानों पर नेपथ्य नें ध्वनि तथा संगीत योजना का आयोजन किया है । जैसे – साम्राज्ञी तिषि चित्रा के बारे में विचार कर रही है तभी पृष्ठभूमि से आवाज आती है – सहसा नेपथ्य में से बिल्कुल नीरस हँसी की आवाज सुनाई देती है । साम्राज्ञी चौंक उठती है "[2] , "थोड़ी देर बार नजदीक के उद्यान के लता–कुंजों में से एक बहुत ही करूण गान की ध्वनि सुनाई देने लगती है।"[3] , " नेपथ्य में चित्रा के गीत की आवाज अब बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है ।"[4]

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने ध्वनि और संगीत का प्रयोग किसी घटना या प्रसंग की वास्तविकता और प्रभावपूर्ण रीति से दर्शाने के लिए किया है । "अशोक " में युद्ध के लिए

----

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ– 15 ।

2 वही, पृष्ठ–93 ।

3 वही, पृष्ठ– 94 ।

4 वही, पृष्ठ– 94 ।

निकले सैनिकों के मुख में निम्न गीत का आयोजन वातावरण में स्फूर्ति पैदा करता है --

" सुनो वीर । बजती रणभेरी ,करती दूर तुम्हें आह्वान,
चलो विजय लक्ष्मी वर लावें ,प्राप्त करें वैभव धन-मान।"[1]

स्पष्ट है कि विद्यालंकार जी ध्वनि एवं संगीत के तंत्र का प्रयोग करने में सफल हैं ।

" रेवा " में प्रत्यक्ष मंच तथा नेपथ्य में ध्वनि एवं संगीत योजना का आयोजन विद्यमान है । जैसे नेपथ्य में "अचानक ऐसा प्रतीत होता है, जैसे राजमहलों से सुनाई देनेवाला संगीत क्रमशः निकट अता चला जा रहा है ।"[2] " रेवा " के आरंभ में गुरूदेव और नायिका राजकुमारी रेवा के बीच वार्तालापचल रहा है ।इसमें संसार की भयानकता स्पष्ट करने हेतु पार्श्व में बिजली और बारिश की योजना बनाई है । जैसे --" सहसा संपूर्ण आकाश बिजली की एक प्रचंड चमक से प्रभासित-सा हो जाता है और उसके कुछ ही क्षणों के बाद बादलों में वज्रपात का-सा शब्द सुनाई देता है । साथ-ही-साथ मुसलाधार वर्षा टप-टप गिरने लगती है ।"[3] यहाँ पर नाटककार ने प्रकृति की भयानकता का जीता जागता चित्र खड़ा कर दिया है । राजकुमार यशोवर्मा के राज्याभिषेक के समय मंगलवाद्यों का आयोजन किया है ।" राजकीय वाद्ययंत्र अत्यंत मधुर मंगल स्वर निकालने लगते हैं और इस मंगलमय वातावरण में राजवेश धारण किए युवराज यशोवर्मा उनके पितृव्य तथा कुमार जनार्दन राज्यसभा में प्रवेश करते हैं ।"[4]

" न्याय की रात " के कथानक में प्रवाह लाने और उसे सशक्त बनाने हेतु अनेक स्थानों पर ध्वनि एवं संगीत का आयोजन किया है । जैसे " परदा उठते ही दीवार की घड़ी पाँच का एक टन बजाती है ।"[5] आदि ध्वनि तंत्र निर्देश में आते हैं । चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटकों में ध्वनि और संगीत का प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष (अर्थात् पार्श्व) रूप में प्रयोग किया है जो मंचीय तंत्र निर्देशन के लिए आवश्यक है और उससे नाटक की सफलता में सहायता है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -अशोक, पृष्ठ- 49 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -रेवा, पृष्ठ- 38 ।

3 वही, पृष्ठ-16 ।

4 वही, पृष्ठ- 140 ।

5 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ- 26 ।

निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के प्रथम दो नाटक "अशोक" और " रेवा " पाठ्य नाटक ही थे । ये रंगमंच की दृष्टि से नहीं लिखे थे फिर भी उनमें रंगमंचीय तंत्रनिर्देशन , रूपसज्जा , दृश्यसज्जा, प्रकाशयोजना और ध्वनि एवं संगीत संयोजन का बड़ी सफलता से प्रयोग किया है । रंगमंचीय तंत्रनिर्देशन बड़े ही बौद्धिक चातुर्य का उपयोग कर दिए गए हैं, इसी कारण आज कल आधुनिक तंत्रज्ञान के प्रयोग से प्रकाशयोजना और नेपथ्य की आड़ में पाठ्य–नाट्य भी बेकार नहीं बल्कि बड़ी सफलता के साथ मंच पर प्रस्तुत कर सकते हैं ।

विद्यालंकार जी का " न्याय की रात "नाटक पूरी तैयारी के साथ मंच की दृष्टि से लिखा गया पहला और अंतीम नाटक है जो सफलता की चोटी पर पहुँचा है । सभी दृष्टि से संपन्न यह नाटक रंगमंचके लिए लिखा गया था । इसमें रंगमंचीय तंत्रनिर्देशन में स्थल–काल , वातावरण का निर्देश, रूपसज्जा में रंगभूषा , केशभूषा, वेशभूषा का बारिकी से निर्देशन तथा अनुकूल प्रयोग किया है । दृश्यसज्जा में स्थल-काल सूचक दृश्य योजना, वातावरण निर्मिति में सफल है । प्रकाश-योजना कम भीक्यों न हो मगर सफलता के साथ दर्शायी है । ध्वनि और संगीत संयोजन घटना, प्रसंग के प्रभाव को स्पष्ट करने में अत्यंत सफल है ।अतः अंततः निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि रंगमंच शिल्प की दृष्टि से विद्यालंकार जी के नाटक सफल सिद्ध होते हैं ।

5·8 उद्देश्य शिल्प

हर रचना के पीछे रचनाकार का कोई न कोई उद्देश्य रहता है । बिना किसी उद्देश्य के रचना हो ही नहीं सकती । विद्यालंकार जी के नाटक सोद्देश्य हैं जिसमें सामजिक समस्याएँ, भ्रष्टाचार , रिश्वत , दलाली, नारी की समस्याएँ, जाति धर्म राजकीय गन्दगी आदि सभी बातों पर हमें सोचने के लिए प्रेरित किया है । यहाँ पर विद्यालंकार जी के नाटकों के उद्देश्य शिल्प का विवेचन प्रस्तुत है ––

5·8·1 युद्धकालीन विभीषिका का चित्रण

स्वयं लेखक युद्धकालीन परिस्थिति को अनुभव कर चुके हैं । वे अपने"अशोक " , " रेवा " और " न्याय की रात " में इस परिस्थिति को अंकित करते हैं ताकि आगे चलकर लोग इस भयानकता से परिचित हो और जिन समस्याओं का सामना वर्तमानकाल में करना पड़ रहा है वह

भविष्य में न करना पड़े ।

एक पथिक और भिखारी के वार्तालाप से युद्ध से आक्रांत जनता को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है उसका पता चलता है । जैसे – " उसके बाद, चिकित्सालय से विदा होते ही मुझे छुट्टी दे दी गई ।मैं और कर भी क्या सकता था बेटा । युद्धभूमि से घर चला आया । तीन महीने तक मुझे राज्य की ओर से गुजारे लायक धन मिलता रहा । परंतु उसके बाद वह बन्द हो गया । हमारा देश खतरे में है । राजकोष खाली हो गया ।सारे राज्य में जवान आदमी देखने को भी नहीं मिलते । सब तरफ महामारी और अकाल का आधिपत्य है,इस दशा में मैं महाराज को क्या दोष दूँ बेटा ।"[1] इससे स्पष्ट है कि युद्ध के परिणामस्वरूप एक सैनिक अपाहिज होकर भिखारी बन जाता है तथा राजा से लेकर प्रजा तक सभी को युद्ध के भयंकर परिणाम भुगतने पड़ते हैं । ऐसा हर बार होता गया तो पृथ्वी पर स्थित मानव जाति ही नष्ट हो जाएगी । अतः इसमें लेखक युद्धकालीन परिस्थिति से दर्शक को वाकिफ करन चाहते हैं । लेखक अपने मन की बात शीला और आचार्य उपगुप्त के माध्यम से कहते हैं । जब शीला आ.उपगुप्त से आशीर्वाद माँगती हैं तब उपगुप्तअपनी आँखों में आँसू भरकर कहते हैं " बेटी, मैं तुम्हें क्या आशीर्वाद दूँगा तुम्हीं इस संसार को इस अभागी मानवजाति को यह आशीर्वाद दो कि वह इनव्यर्थ के लड़ाई-झगडों से अपने को और भी अधिक दुःखी न बनाए ।"[2]

युद्ध करने या झगड़ा करने से हमारी मित्रता मिट जाती है, संस्कृति का ह्रास हो जाता है ।रेवा ओर उसकी सखी दोनों की बातचीत से स्पष्ट होता है कि युद्ध करनेवाले तथा लड़ाई-झगड़ा करनेवाले अपनी संस्कृति को भूल जाते हैं । सखी रेवा से कहती है " वह इसलिए कि आचार-विचार की दृष्टि से वे हम लोगों की अपेक्षा क्षुद्र हैं । वे लड़ते–भिड़ते हैं और सुना है कि एक–दूसरे की हत्या तक भी कर डालते हैं ।[3] युद्ध और विभाजन के कारण हर हर एक व्यक्ति को ठेस पहुँची है । लेखक अपनी रचनाओं में युद्धकालीन विभीषिका को चित्रित करने में काफी सफल रहे हैं । यही इनका उद्देश्य भी है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक, पृष्ठ– 97 ।

2 वही, पृष्ठ– 113 ।

3 चंद्रगुप्त विद्यालंकार – रेवा, पृष्ठ– 55 ।

5.8.2 **नीतिमूल्यों की प्रतिष्ठापना**

नैतिकता में व्यक्तिकी अपनी जिम्मेदारी तथा अपना कर्तव्य महत्त्वपूर्ण है । हर एक को चाहिए कि समाज तथा देश में स्थित संस्कृति ,सभ्यता को सँभालने हेतु अपने आपको सुसंस्कृत बनाए । जब भी व्यक्ति गलत रास्ते पर जाता है तब वहाँ उसके आचरण में दोष आ जाता है अतः संस्कृति का ह्रास हो जाता है । अतः समाज, संस्कृति तथा धर्म ने कुछ नैतिक मूल्यों का आयोजन किया है और उसे ही लक्ष्य मानकर हर इन्सान को चलना चाहिए । क्योंकि समाज तथा मूल्यों का संस्कार ही नैतिकता है । इसलिए हर एक का अपना आचरण नैतिक हो तभी हम संस्कृत तथा सभ्य कहलाएँगे, तभी हमारी संस्कृति अबाधित रहेगी । लेकिन हम स्वतंत्र हिन्दुस्तान तथा उससे पहले यवनकाल से लेकर देखते हैं कि - लोग सही आचरण ,सही रास्ता छोड़कर गलत रास्ते पर चल रहे हैं । स्वातंत्र्योत्तर भारत में तो नीतिमत्ता पूरी तरह से गिर गई है । उसे सही रास्ते पर लाने के लिए समाज परिवर्तन होना आवश्यक है और समाज परिवर्तन किसी के कहने से तो नहीं होता । उसके लिए हर एक को अपना योगदान करना पड़ता है और सब से ज्यादा महत्वपूर्ण काम साहित्यिक करता है । नीतिमूल्यों का जो अवमूल्यन हो रहा है उसे साहित्यिकों ने ही अपनी रचनाओं में संस्कृति का दर्शन कराते हुए सही राह दर्शाने का प्रयास किया है । यही कार्य चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों में किया है । उनके नाटकों के उद्देश्य में से प्रमुख उद्देश्य नीतिमूल्यों की प्रतिष्ठापना करना रहा है ।

प्रकृति का नियम "जीवो जीवस्य जीवनम्" सृष्टि के संदर्भ में ठीक है । लेकिन अन्य प्राणीमात्रों में से मनुष्य प्राणी भिन्न है इसी कारण वह प्राणी (पशु) न होकर मनुष्य है, इन्सान है। लेकिन आज मनुष्य इन्सान न होकर पशु बन गया है वह भी सृष्टि के अन्य पशुओं जैसा बर्ताव कर रहा है और प्रगति का दावा कर रहा है । अतः इस तत्व को बदलना होगा । " जीओ और जीने दो " का तत्व अमल में लाना चाहिए । इस दृष्टि से आ. उपगुप्त शीला से कहते हैं " इस विश्व में सभी जगह छल, कपट, हत्या और अपहरण हो रहा है ।प्रकृति अपने विधानद्वारा प्राणी–मात्र को अपहरण का संदेश दे रही है ।यहाँ बलशाली निर्बल को खा जाता है ,बड़े जीवों का आहार छोटे जीव हैं, बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाती है ।साँप और छिपकलियाँ कीडे–पतंगों को खा कर जिन्दा रहते हैं ।जहाँ तक जिसका बस चलता है अपहरण करता है । प्रकृति के इन विधानों से मनुष्य ने भी अपहरण का पाठ पढ़ लिया है । हमारे मनुष्य समाज में भी धनी गरीब को चूसता है राजा प्रजा के बल पर शक्तिशाली बनता है, जमींदार किसानों के

अधिकार का अपहरण करता है ,विद्वान मूर्खों को अपना शिकार बनाता है ।"[1] इस दर्शनिक संवाद के जरिए लेखक भारतीय समाज का विदारक चित्र उपस्थित कर नीतिमूल्यों की प्रतिष्ठापना करना चाहते हैं ।

"रेवा " में संस्कृति के दर्शन आचार्य पुण्ड़रीक के उपदेश से होते हैं । यशोवर्मा और जनार्दनका संवाद द्रष्टव्य है "देखो जनार्दन , मैं मानता हूँ कि पुण्ड़रीक शस्त्र–विजय के विरूद्ध है ।वह शस्त्र–विजय की अपेक्षा हृदय की विजय को अधिक महत्व देते हैं । परंतु " विजय " के सिद्धान्तसे तो सहमत है न ? यह सांस्कृतिक विजय विश्व भर का कल्याण करेगी ,यही तोउनका संदेश है ।"[2]

"न्याय की रात " का राजीव बड़ा ही दिलेर और ईमानदार है । उसके मुख से लेखक ने यथार्थ का ज्ञान कराया है,जिससे कि लोग नीति की राह पर चल पड़े । यहाँ पर राजीव का कथन द्रष्टव्य है कि "हमारा यह विशाल देश एक बहुत बड़ी मानसिक बीमारी का शिकार है । यह अत्यन्त घातक बीमारी है,हमारे देश में गहरी भेद–भावना की विद्यमानता । कभी प्रान्त के नाम पर,कभी धर्म के नाम पर ,कभी भाषा के नाम पर और कभी जात–पाँत के नाम पर हमारे देश के करोड़ो निवासी आसानी से बहका लिए जाते हैं ।और तब वे आपस में ही लड़ने-झगड़ने लगते हैं । इन बातों में उलझकर देश की चिन्ता किसी को नहीं रहती । यहाँ तक की बहुत–से सरकारी अफसर भी इन्ही कमजोरियों के शिकार हैं ।"[3]

नीति मूल्यों की प्रतिष्ठापना करते हुए लेखक ने नौजवानों को ईमानदार रहने के लिए सचेत किया है तथा उनके ईमानदार रहनेसे भ्रष्ट लोगों की क्या अवस्था होती है इसे स्पष्ट किया है, हेमंत के वक्तव्य से । यहाँ हेमंत का वक्तव्य द्रष्टव्य है " आज किसके पास एक लाख नकद होगा साहब । सरकारने सब पैसा चूस लिया है । फिर इतनी बड़ी रकम का भूगतान भी आसान नहीं होगा ।पुलिस भी अब बहुत चौकन्नी हो गई है । और सच बात तो यह है कि पिछले दिनों ये जो पढ़े लिखे नये नौजवान एस.पी.आए हैं,इनसे तो मैं बहुत डरता हूँ । न जाने किसने इन पुलिसवालों को भी आदर्शवादी बना दिया है ।"[3] लेखक नौजवानों पर काफी भरोसा रखते हैं।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –अशोक, पृष्ठ – 85–86 ।
2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ– 36 ।
3 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –न्याय की रात , पृष्ठ– 119 ।
4 वही,पृष्ठ– 61 ।

स्पष्ट है कि उनमें नीति मूल्यों की प्रतिष्ठापना करना ही लेखक का मुख्य उद्देश्य रहा है ।

5.8.3 "वसुधैव कुटुम्बकम" की भावना को उजागर करना

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों में जिस प्रकार नीतिमूल्यों की प्रतिष्ठापना की है उसी प्रकार पूरा विश्व एक कुटुम्ब है इसभावना को भी उजागर किया है । यहां पर जाति–पाँति, भेद–भाव, वर्ण–द्वेष न हो, सब मानवमात्र एक है । इसे आधारभूत मानकर "रेवा " नाटक में उन्होंने अनेक द्वीपों का उल्लेख किया है, ये अनेकविध द्वीप ही प्रतीकात्मक रूप में संसार में फैले देश–विदेश हैं । इनके माध्यम से उन्होंने उनके बीच अच्छे संबंध पस्थापित किए हैं । रेवा राजकुमार यशावर्मा से जी जान से प्यार करती है। वह अपना घर बसाना चाहती है लेकिन अपने कर्तव्य के आगे अपने प्यार का त्याग कर देती है । वह जानती थी कि यशोवर्मा की अनेक द्वीपों के उनके उद्धार के लिए आवश्यकता है । तात्पर्य यह कि वह विश्व को एक कुटुम्ब के रूप में देखना चाहती है । यहाँ अपनी इस भावना को लेखक ने रेवा के मुख से उद्धृत किया है । यहाँ रेवा का कथन द्रष्टव्य है " युवराज आप स्वदेश जाने की तैयारी कीजिए । आपका जीवनएक विशेष उद्देश्य के लिए बना है । आपकी अपनी महत्त्वाकांक्षाएँ हैं । विश्व के अनेक द्वीपों को आप से बड़ी–बड़ी आशाएँ हैं । जाइए, विश्व की आशाओं को पूरा कीजिए ।एक मैं ही हूँ जो व्यर्थ हूँ ,जो अपदार्थ हूँ । जिसके जीवन का कोई उद्देश्य नहीं । मैं रानी हूँ, मैं आशाद्वीप की महारानी हूँ । आप जाइए राजकुमार ।"[1] यहाँ पर लेखक अप्रत्यक्ष रूप से युद्ध प्रसंग को टालना चाहते हैं । कुटुम्ब में कुछ पानेके लिए कुछ खोना पड़ता है । रेवा के चरित्र से स्पष्ट है कि लेखक " वसुधैव कुटुम्बकम" की भावना को उजागर करना चाहते हैं ।

5.8.4 वर्गहीन समाज की प्रतिष्ठापना

युगों–युगों से हम देखते आये हैं कि हमारा समाज विविध जाति–पाँति तथा वर्गों में विभाजित है और इस वर्ग की दूरी दिन–ब–दिन बढ़ती ही चली जा रही है । परिणाम स्वरूप कभी धर्म के नाम पर, जाति–पाँति के नाम पर, वर्ग के नाम पर अन्याय अत्याचार हो रहा है । बड़े लोग छोटे लोगों का खून चूसते हैं और यह प्रवृत्ति बढ़ती ही जा रही है । इसी गहरी संवेदना को प्रकट करते हुए लेखक हमारे समाज को विभिन्न वर्गों में देखना नहीं चाहते । वे वर्गहीन

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ– 112 ।

समाज की प्रतिष्ठापना करना चाहते हैं तथा जाति–पाँति, बाह्यांड़बर आदि का कड़ा विरोध करते हैं । जाति तो अपने कर्म और व्यवसाय पर निर्भर है । लेखक " रेवा " में राजकुमारी इन्दिरा और गोविन्द के वार्तालाप से इस बात को स्पष्ट करते हैं ––

"इन्दिरा – क्या मैं तुम्हारा परिचय ज्ञान सकती हूँ ?

गोविन्द – राष्ट्रकूट राजवंश में मेरा जन्म हुआ है ।वर्तमान राष्ट्रकूट सम्राट मेरे चतुर्थ पितृव्य है ।

इन्दिरा – फिर तुमने अपने सम्राट की सेवा क्यों छोड़ दी ?

गोविंद – मैं क्षत्रिय नहीं रहा, राजकुमारी । मेरी रूचि शिल्प की ओर थी । मैं क्षत्रिय से शिल्पी बन गया हूँ ।"[1]

यहाँ पर प्रतीत होता है कि गोविंद क्षत्रिय था, लेकिन लेखक किसी धर्म,जाति में समाज को देखना नहीं चाहते । वे तो समाज को वर्ग रहित देखना चाहते हैं ।

जब युद्ध विराम के बाद युवराज यशोवर्मा ,सेनापति, मकरन्द, जनार्दन का जहाज समुंदर में अपनी राह भटक जाता है तथा उन्हें महासागर में भयंकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है तब मकरंद माझियों के सन्दर्भ में यशोवर्मा से कहता है " इनमें से अधिकांश माझी वर्णसंकर हैं, उन्हें देश,जाति कुल आदि का जरा भी ध्यान नहीं होता । परन्तु इन माझियों में चम्पा का एक नागरिक भी है। मुझे यह भय है कि कहीं उसे आपकी वास्तविकता का परिचय तो नहीं मिल गया ।"[2]

यहाँ पर लेखक वर्णसंकर के माध्यम से वर्गहीन समाज की प्रतिष्ठापना ही चाहते हैं ।

8.8.5 नारी समस्या

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने नारी की अनेकविध समस्याओं को अपने नाटकों में चित्रित किया है । उसमें विवाह समस्या,दहेज समस्या,शरणागत लड़कियों की समस्याएँ, विधवा समस्या आदि समस्याओं का अंतर्भाव किया है । नारी की समस्याओं को भी चित्रित करना भी लेखक का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य रहा है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ– 23 ।

2 वही, पृष्ठ– 84 ।

हमारे समाज में नारी विविध रूपों में उभर आयी है । पुराणकाल में उसे शक्ति माना जाता था । बाद में श्रद्धा , भोग्या आदि रूपों में देखा गया । नारी के संदर्भ में वर्ममानकालीन रवैये को स्पष्ट करते हुए कवि धूमिल अपने मन की बात स्पष्ट करते हैं ---

"औरत ऑचल है,
जैसा कि लोग कहते हैं -स्नेह है,
किन्तु मुझे लगता है ,
इन दोनों से बढ़कर
औरत एक देह है ।"[1]

"न्याय की रात " की कमला नामक शरणार्थी लड़की को समाज के दरिन्दे अपनी गन्दी वासना का शिकार बनाना चाहते हैं । अन्य कई स्थानों पर विधवा की समस्याओं का भी पर्दाफाश किया है । लेखक ने स्त्री समसयाओं के साथ-साथ उसे त्याग,आदर्श, सेवाभाव की प्रतिमूर्ति, प्रेरणादायिनी आदि रूपों में चित्रित कर उसे उसका उचित स्थान देने का प्रयास किया है । रेवा यशोवर्मा की प्रेरणा बन जाती है और परिणामस्वरूप यशावर्मा अपने विजित प्रदेश जीत जाता है । फिर भी रेवा उसकी क्यों नहीं बनी इसके जबाब में यशोवर्मा कहता है " नहीं वह एक ऐसी बात थी, जो असम्भव है ।आशाद्वीप की महारानी राजकुमारी रेवा । न वह कभी अपने द्वीप से बाहर जा सकती है और न कभी कोई बाहर का व्यक्ति आशाद्वीप में स्थिर रूप से रहने दिया जा सकता है ।परन्तु मेरा रोम-रोम अनुभव करता है कि मेरा यह संपूर्ण साम्राज्य राजकुमारी रेवा की ही कृपा का फल है ।"[2]

यहाँ हर सफल पुरूष के पीछे एक स्त्री का हाथ होता है । इस दृष्टिकोण का दर्शन हो जाता है ।चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी ने नारी जगत की अनेक समस्याओं को उठाकर तथा नारी चरित्र को सम्मान का स्थान देकर उन्हें ऊपर उठाया है । नारी को प्रेरणादायिनी, शक्तिशाली, त्यागमयी, आदर्शवादी आदि रूपों में चित्रित कर गौरवान्वित किया है ।

---

1 डॉ. ग.तु. अष्टेकर -कटघरे का कवि धूमिल, पृष्ठ- 131 ।

2 चंद्रगुप्त विद्यालंकार -रेवा, पृष्ठ- 142 ।

5.8.6 राजनीतिक समस्याएँ : राजनीतिक अव्यवस्था का पर्दाफाश

लेखक ने अपने नाटकों में अनेक राजनीतिक समस्याओं का उद्घाटन किया है और इन समस्याओं के माध्यम से राजनीतिक अव्यवस्था का पर्दाफाश किया है । हमारे देश को आजादी मिल गई ।उसके लिए नौजवानों तथा स्त्रियों ने ही नहीं तो बूढ़ों ने तक अपना खून बहाया । देश की आजादी के लिए अनेक बलिदान किये गये । आजादी से पहले लोगों ने स्वतंत्र भारत के सपने देखे थे । उनकी धारणा थी कि आजादी मिलने पर हम चैनकी नींद सोयेंगे । हमारे देश में जो कुछ है ,हमारा अपना होगा । उस पर अपना अधिकार होगा । लेकिन राजनीतिक अव्यवस्था,स्वार्थांध राजनेता, भ्रष्टाचारी पुलिस अफसर तथा गैर जिम्मेदार अधिकारियों के कारण इससे विपरीत ही हुआ । राजनेता अपने स्वार्थ के लिए दंगा-फसाद, भ्रष्टाचार,मारकाट, आगजनी जैसे काले कारनामे ,हत्याकांड़ करवाते रहें । स्थान-स्थान पर भ्रष्टाचार ने अपना अड्डा जमाया। देश के नौजवान बेरोजगारी की आग में झुलसने लगे । तात्पर्य यह कि देश का नक्शा ही उलटा हो गया । राजनीतिक अव्यवस्था के कारण हमारा देश लूला-लंगडा, अपाहिज हो गया और इसी का चित्रण लेखक ने विवेच्य नाटकों में किया है ।

राजनेता कुर्सी पाने के लिए क्या कुछ नहीं करते ? वे ही दंगा-फसाद ,हत्याकांड , आगजनी ,भ्रष्टाचार ,अन्याय - अत्याचार आदि चीजों को बढ़ावा देते हैं फिर भी समाज में प्रतिष्ठित कहलाते हैं । इन राजनेताओं के दुहरे व्यक्तित्व को बेनकाब करने का प्रयास लेखक ने जुगलकिशोर और सदानंद के वार्तालाप से किया है । सदानंद उनकी पोल खोलते हुए जुगलकिशोर से कहता है " रामनाम की महिमा सुनी है न तुमने ? इस कलिकाल में वह शक्ति परमात्मा के बनाए कुछ बंदों के नामों में आ गई है । फर्क इतना ही है कि रामनाम की महिमा युगों तक चली इन बन्दों की ताकत सिर्फ तब तक रहती है ,जब तक ये कुर्सी पर रहते हैं । आज इस बात का ज्ञान रखना जरूरी है कि किस मौके पर कौन-सा नाम अमोध सिद्ध होता है ।"[1] अतः हम देखते हैं कि महाभारत काल में अमोध शक्ति का प्रयोग सत्पक्ष में लड़ने वाले घटकोत्कच का वध करने हेतु कर्ण ने किया है । लेकिन ये राजनेता सरासर आम जनता की हत्या करते हैं । राजनैतिक अव्यवस्था ,शासनतंत्र की कमजोरी के कारण तथा व्यवस्था में गड़गड़ी होने के कारण अनेकविध समस्याओं का निर्माण हुआ है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात, पृष्ठ- 76 ।

5.8.7 राष्ट्रीय अखंड़ता तथा राष्ट्र निर्माण की भावना

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी अपने नाट्य साहित्य के माध्यम से भारतीय नागरिकों के मन में राष्ट्रीयता , राष्ट्रप्रेम , एकता तथा अखंड़ता के तत्वों को चिरंतन रखना चाहते हैं जिसका आज भारत में अभाव ही अभाव दिखाई देता है । "न्याय की रात " नाटक की भूमिका में वे कहते हैं " स्वार्थसाधन, फूट और इर्ष्या का वातावरण इस देश में सदियों से है, देश की अन्धविश्वासी साधारण जनता जागरूक नहीं है ।"[1] इसी कारण वे देश में और भी अधिक निस्वार्थ साधना की आवश्यकता तथा भारत भर में भावनात्मक एकता का प्रसार करना चाहते हैं । "अशोक " नाटक में युवराज अशोक तक्षशिला के विद्रोह को शांत कर मगध साम्राज्य में फूट टाल देते हैं । अन्याय के खिलाफ विद्रोह ठीक है मगर साम्राज्य से बाहर निकलना यह प्रवृत्ति भयंकर चिंताजनक है । अपने देश में रहकर ही अपनी स्वाधीनता की माँग ठीक है । उससे अलग निकलकर जाना राष्ट्रीय हित में बाधा है । इसमें राष्ट्रीय एकता तथा अखंड़ता को खतरा है ।

"न्याय की रात " में भी स्वार्थ पूर्ति हेतु देश को बेच कर खानेवाले हेमंत की प्रवृत्ति पर कठोर आघात किया है । इस नाटक में देश में स्वार्थ पूर्ति हेतु भाषा, जाति, धर्म, वंश के नाम पर फूट डालनेवाले नेता लोगों की पोल खोल दी है ।

" रेवा " नाटक में अनेक खंड़ों में द्वीपों में विभाजित भारत वर्ष को एक साम्राज्य (महासाम्राज्य) में रूपांतरित करने का काम सम्राट यशोवर्मा द्वारा किया गया है जो राष्ट्रीय एकता तथा अखंड़ता का द्योतक ही है । वह लेखकीय उद्देश्य की ही पूर्ति करता है ।

इन प्रमुख उद्देश्यों के साथ अनेक गौण उद्देश्यों का सूत्रपात विद्यालंकार जी ने अपने नाटकों में किया है । विवेच्य नाटकों में मजदूर लोगों की समस्या, नौकरी समस्या, शिक्षा-क्षेत्र में अव्यवस्था, शेअर घोटाला , भाई भतीजावाद, भ्रष्टाचार, शरणार्थी लोगों की समस्या, अंधविश्वास, भाग्यवाद, भूख समस्या, बाप-बेटे के बीच टकराहट का वातावरण , गरीबी तथा शोषण आदि समस्याओं पर प्रकाश डाला है । विद्यालंकार जी का कहना है कि " किसी भी देश की गरीबी मंत्रबल से दूर नहीं की जा सकती । उसके लिए बहुत कठिन और लंबी साधना और सबसे बढ़कर दृढ़ संकल्प की जरूरत होती है ।"[2] स्पष्ट है कि विद्यालंकार जी ने अनेकविध समस्याओं का उद्घाटन कर उनके समाधान को भी सूचित किया है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार - न्याय की रात , पृष्ठ- 4-5 ।

2 वही, पृष्ठ- 4 ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटकों में अनेक समस्याओं के माध्यम से उद्देश्य की पूर्ति हुई है ।उन्होंने जिन उद्देश्यों का उद्घाटन करने का भरसक प्रयत्न किया है उनमें मुख्य हैं – युद्धकालीन विभीषिका का चित्रण करना, नीतिमूल्यों की प्रतिष्ठापना करना, विश्वकुटुंबकम की भावना को उजागर करना, नारी समस्या को उद्घाटित करना, राजनीतिक अव्यवस्था का पर्दाफाश करना , वर्गहीन समाज की प्रतिष्ठापना करना, राष्ट्रीय अखंड़ता और राष्ट्रनिर्माण की भावना को बढ़ावा देना आदि । इन प्रमुख उद्देश्यों के साथ-साथ कुछ अन्य उद्देश्य भी हैं –गरीबी निर्मूलन, शिक्षा प्रसार, सांस्कृतिक रूप की जानकारी, संस्कृति ,सभ्यता कला कौशल का प्रचार–प्रसार, सांस्कृतिक लेन–देन तथा सांस्कृतिक दोषों को दूर करना आदि । अंततः निष्कर्ष यह कि चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटक उद्देश्य शिल्प की दृष्टि से काफी सफल बन पड़े हैं ।

5.9 **शीर्षक**

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटकों के शीर्षक नायक, नायिका या प्रमुख पात्र अथवा घटना के आधार पर रखे हैं । विद्यालंकार जी के प्रथम नाटक अशोक का शीर्षक इस नाटक के नायक के नाम पर दिया है । अशोक नाटक का नायक है । अशोक जिसे मध्य नजर रखते हुए कथा का चयन किया गया है , प्रारंभ से अंत तक इस नाटक में विद्यमान है । इसका कथानक मौर्य सम्राट अशोक के जीवन की घटनाओं से संबंध रखता है । इसमें अशोक को मगध साम्राज्य का सम्राट बनने की महत्त्वाकांक्षा,उसकी पूर्ति के लिए अनेक अन्याय , अत्याचर करना, अपने सगे बड़े भाई सुमन की हत्या करवाना, कलिंग महायुद्ध और उनकी भार्भी युवराज सुमन की वाग्दत्ता पत्नी के सेवाभाव और आत्मबलिदान की भावना के प्रभावस्वरूप हृदयपरिवर्तन से बौद्ध धर्म स्वीकारना तथा जनकल्याणकारी कार्य में जुट जाना आदि सभी बातें अशोक से संबंधित हैं । हिंसा और अहिंसा की चरमसीमा लांघनेवाले अशोक का प्रभाव पूरे नाटक में होने के कारण "अशोक " शीर्षक सचमुच योग्य ही है । इस नाटक में " अशोक " नाम का जादू, उसका आतंक

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –न्याय की रात , पृष्ठ – 4 ।

देखेंगे तो शीर्षक अशोक ही उचित लगता । स्वयं अशोक के शब्दों मे देखिए " मैं संसार भर में "अत्याचारी अशोक " के नाम से प्रसिद्ध हूँ । माताएँ अपने बच्चों को मेरा नाम लेकर डराती हैं । मेरी गणना अकाल, महामारी और मौत के साथ की जाती है । सुबह उठकर कोई मेरा नाम लेना भी पसंद नहीं करता ।"[1] पूरे नाटक में अशोक नाम का जादू है, उसी का सभी ओर प्रभाव है । और एक उदाहरण द्रष्टव्य है "कलिंग युद्ध में एक सैनिक के बलिदान पर उसकी नववधू विजया पागल बनती है और कहती है "हाँ मैं समझी । इन्हें वह राक्षस अशोक खा गया है। हत्यारा । दैत्य । वह सारी तुशाली को खा जा जाएगा । वह इस सम्पूर्ण विश्व को खा जाएगा । राक्षस । पिशाच।।"[2] जब सैनिक गाँव–गाँव को लूटते फिरते हैं तब एक स्त्री की प्रतिक्रिया देखिए " इस गाँव को अशोक लग गया है बेटा । दौडो, जान की बाजी लगाकर दौड़ो । यह देखो, अशोक गाँव को आग लगा रहा है "[3] इस नाटक में प्रारंभ से मध्य तक और चरमसीमा से लेकर अंत तक अशोक ही अशोक नजर आता है । अतः उक्त रचना का शीर्षक सार्थक एवं यथोचित है ।

" रेवा " विद्यालंकार जी का दूसरा नाटक है । इस नाटक का शीर्षक नायिका तथा प्रमुख स्त्री पात्र के नाम पर रखा गया है। " रेवा " नाटक भारतीय सभ्यता , संस्कृति और कला के देश–विस्तार कीकहानी है । "रेवा " ऐतिहासिक आधार को लेकर लिखा गया नाटक है । काम्बोज के राजकुमार एक महत्त्वाकांक्षी युवक साम्राज्य विस्तार के लिए प्रयत्नशील हैं । वे देश–विदेश के लोगों को सभ्यता और संस्कृति का पाठ पढ़ाते हैं । यशोवर्मा के इस कार्य की प्रेरणा तथा आधारशीला रेवा है । क्योंकि वही उन्हें अग्निचूर्ण(बारूद) बनाने की कला सिखाती है तथा शस्त्र–अस्त्र देती है जिसके अभाव स्वरूप उन्हें चम्पा से पराजित होना पड़ा था , बाद में दिग्विजय प्राप्त करते हैं । वही उस फलप्राप्ति का कारण बन जाती है । यहाँ यशोवर्मा और रेवा के बीच प्रेमसंबंध भी हैं पर वे रूढ़ि परम्परा के कारण विवाह नहीं कर सकते ।रेवा आशाद्वीप की रानी है जो अपनी प्रजा की खातिर प्यार का त्याग कर देती है । वह अंत तक यशोवर्मा की प्रतीक्षा करती रहती है ।उनकी प्रतीक्षा ,प्रतीक्षा रह जाती है । अंत में एक भयानक तूफान और भूकंप से पूरा आशाद्वीप नष्ट हो जाता है । यशोवर्मा रेवा को न पाकर निराश हा जाता हे ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकर – अशोक, पृष्ठ– 105 ।

2 वही, पृष्ठ– 102 ।

3 वही, पृष्ठ– 105 ।

नाटक का अंत भी रेवा की याद में करूणामय बन जाता है । प्रारंभ से अंत तक रेवा के प्रति सहानुभूति निर्माण होती है । नाटक का प्रारंभ भी उसी के द्वारा हुआ है । कथा को विद्यालंकार जी ने अनेक मोड़ पर घुमाया है फिर भी रेवा उनका केन्द्र है । यशोवर्मा प्रत्येक स्थल घटना पर उसे याद करते हैं । साम्राज्य विजय का श्रेय भी उसे देते हुए वे कहते हैं " इस सब के लिए आशाद्वीप की राजकुमारी रेवा का कृतज्ञ होना चाहिए । उनकी सहायता न मिलती तो क्या कभी यह संभव था कि हम लोग चम्पा को विजय कर सकते ।"[1]

इस नाटक में प्रारंभ , मध्य , चरमसीमा और अन्त रेवा से संबंधित घटना को लेकर हुआ है । वह एक आदर्श चरित्र है जिसका प्रभाव भी नाटक में है । इसी कारण " रेवा " शीर्षक योग्य ही लगता है ।

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के तीसरे नाटक का शीर्षक है " न्याय की रात " । " न्याय की रात " राजनीति पर लिखा गया सामाजिक उद्‌देश्यपूर्ण नाटक है ।यह सत्ता और व्यवस्था के विकराल परिवेश के खिलाफ उठी एक चिनगारी है जो वास्तविक दूषित सामाजिक, राजनीतिक परिस्थिति को भस्म करने का अंत तक प्रयत्न करती है ।यह चिनगारी दबाव के कारण जलती बुझती नजर आती है , कभी प्रखर ज्वाला बनकर भड़कती है । भारतीय जनता परतंत्रता के अंधकार से बाहर निकलकर भी भ्रष्टाचार तथा अन्याय के अंधकार में डूब गई हैं । उससे बाहर निकालने की कोशिश "न्याय की रात " द्वारा की है ।

हेमंत की काली शक्ति के खिलाफ राजीव जैसे ईमानदार भारतीय नागरिक द्वारा पुकारा गया युद्‌ध एक ही रात में दिखाया गया है । हेमंत भ्रष्टाचारी दूषित परिवेश का राक्षस है । वह अंध:कार का उद्‌गाता है जो समाज़ में निरंतर अंधकार फैलाता है । वह षड्‌यंत्रकारी है । बेईमानी और गैरमार्ग से धनसंचय करकेअपनी ताकत का प्रयोग तस्करी अपहरण , बलात्कार और हत्या के लिए करता है । इन सबके खिलाफ राजीव अकेला लड़ता है ।

हेमंत की काली शक्ति का शिकार हुई असहाय शरणार्थी कमला उनके जाल में फँसकर असमर्थ हुई है जिसे एक रात में राजीव के जरिए न्याय मिलता है । वह "न्याय की रात " साबीत होती हे । "न्याय की रात " शीर्षक विद्यालंकार जी ने बड़े कौशल और बुद्‌धिमानी से दिया है ।

---

1 चंद्रगुप्त विद्यालंकार –रेवा, पृष्ठ – 127 ।

रात अन्याय, अत्याचार का प्रतीक है ।रात में सारे गैर अवैध काम होते हैं जहाँ विद्यालंकार जी ने न्याय की रात की प्रतिष्ठापना की है । गंदी अंधःकारमय काली रात में एक न्याय, अन्याय के खिलाफ बाजी जीतता है । यह सामान्य जनता के लिए आशा की नई किरण है ।

इस नाटक में नाटककार ने न केवल काली रात के यथार्थ से साक्षात्कार कराया बल्कि प्रत्युत्तर में उससे टक्कर देकर सफलता भी दर्शायी है और नाटक की अन्यायी अत्याचारी रात आखिरकार " न्याय की रात " में परिवर्तित दिखलाई है ।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि विद्यालंकार जी के नाटकों के शीर्षक उनके उद्देश्य को पूर्ण करनेमें सहायक हैं । विवेच्य नाटकों के शीर्षक मार्मिक, संक्षिप्त, आकर्षक एवं विषय-वस्तु के अनुकूल हैं । शीर्षक के गुणों की कसौटी पर ये पूर्णतः सफल सिद्ध होते हैं । तात्पर्य यह कि विवेच्य सभी नाटकों के शीर्षक अपने में परिपूर्ण तथा सफल हैं ।

निष्कर्ष

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के अधिकतर नाटकों के कथानक ऐतिहासिक घटना पर आधारित हैं । "अशोक " ओर " रेवा " नाटक को उन्होंने रंगमंच की दृष्टि से नहीं लिखा था । उनका मूल उद्देश्य पाठय-नाटक के रूप में ही था । "अशोक " नाटक की कथावस्तु सम्राट अशोक के साम्राज्यकालीन घटना पर आधारित है ।यह नाटक पाँच अंकों में विभाजित है । प्रत्येक अंक में सात दृश्य हैं । कुल मिलाकर इस नाटक में पैंतीस दृश्य हैं । विवेच्य नाटक में अंक, दृश्य और दृश्यांतर की भरमार है । नाटककार की यह पहली कृति होने के कारण इसमें नाट्यतंत्र की दृष्टि से कुछ त्रुटियाँ जरूर हैं अतः कहना न होगा कि इस नाटक में रचनातंत्र पर नाटककार विद्यालंकार जी का ध्यान कम है । किन्तु फिर भी कथावस्तु का निर्माण बहुत सुन्दर किया है । कथावस्तु को सुगठित तथा मजबूत बनानेमें नाटककार काफी सफल है । कथावस्तु का ढाँचा आकर्षक है ।

चंद्रगुप्त जी की दूसरी रचना " रेवा " पहली से कुछ प्रौढ़ एवं परिपक्व नजर आती है इसकी कथावस्तु प्राचीन हिंदू सम्राट अशोक तथा चोलराज परान्तिक के कुछ ऐतिहासिक सत्य घटनाओं को आधार बनाकर लिखी गई है । यह नाटक पाँच अंकों में विभाजित है । जिस प्रकार

प्रथम कृति " अशोक " में अंक और दृश्य विभाजन समान रूप से था उस प्रकार " रेवा " में नहीं है । " रेवा " में इस दृष्टि से भिन्नता पायी जाती है । यथा – प्रथम अंक में तीन दृश्य, द्वितीय अंक में चार दृश्य, तृतीय और चतुर्थ अंक में पाँच–पाँच दृश्य तथा पाँचवें अंक में पाँच दृश्य विद्यमानहैं । इसमें भी दृश्यान्तर का प्रयोग देखने को मिलता है ।

" न्याय की रात " तीन अंकों में विभाजित है । इसमें दृश्य तथा दृश्यान्तर देखने को नहीं मिलते । प्रथम दो नाटकों की अपेक्षा यह तीसरा नाटक सभी दृष्टियों से परिपूर्ण एवं रंगमंच की दृष्टि से लिखा गया सफल नाटक है । इसकी कथावस्तु आधुनिक काल से संबंधित राजनीतिक तथा सामाजिक परिवेश का यथार्थ चित्रण करती है । तीनों नाटकों के कथानक बोधपरक एवं राष्ट्रीय ,सामाजिक और सांस्कृतिक संवेदना को जगाने का काम करते हैं ।

विवेच्य नाटकों का चरित्र शिल्प नाट्यतंत्र के अनुकूल है । नाटककार को चरित्र निर्मिति में काफी सफलता मिली है । इनके अधिकांश पात्र आदर्शवादी हैं जो पात्र, घटना, परिस्थिति, देश काल–वातावरण तथा परिवेश के अनुकूल हैं । ये पात्र महत्त्वाकांक्षी, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के प्रतीक के रूप में सामने आते हैं ।इसके साथ ही ये पात्र भारतीय सांस्कृतिक ,कलागत विशेषताओं का प्रचार–प्रसार एवं संवर्धन करते हैं । इनके पुरूष एवं नारी पात्र अपना समान प्रभाव समाज पर डालते हैं । चरित्र शिल्प काफी सफल नजर आता है क्योंकि अपने निश्चित उद्देश्य की पूर्ति करने की उनमें पूर्ण क्षमता है ।

संवाद–शिल्प की दृष्टि से नाटक सफल हैं । विवेच्य नाटकों के संवादों में निज की सुन्दरता एवं श्रेष्ठता है जो चरित्रों को सबल बनाने की क्षमता दर्शाते हैं । इन नाटकों में कथा को गति देनेवाले , पात्रों के अंतर्द्वद्व, भाव भावनाएँ स्पष्ट करनेवाले ,सहज स्वाभाविक , संक्षिप्त, चुटिले एवं अर्थ गर्भित संवाद देखने को मिलते हैं । ऐतिहासिक कोटि के नाटकों में कुछ संवाद काफी लम्बे बन पड़ गये हैं फिर भी वे कथावस्तु में बाधा नहीं डालते । इसके साथ ही दार्शनिक एवं उपदेशात्मक संवाद इन नाटकों की अन्य विशेषता है । व्यंग्यात्मक , पात्रानुकूल ,प्रतीकात्मक सवांद भी देखने को मिलते हैं । " अशोक " और " रेवा " नाटक ऐतिहासिक वातावरण की पृष्ठभूमि पर लिखे गए होने के बावजूद भी आधुनिक परिवेश की विडम्बना को स्पष्ट करने में सक्षम हैं अतः निश्चित उद्देश्य की पूर्ति वातावरण के जरिए प्रकट होती है । इनमें आधुनिकता बोध दर्शाने की पूर्ण क्षमता है । देश–काल–वातावरण के अनुरूप पात्र तथा भाषा का गठन

नाटककारने सफलता के साथ किया है । " न्याय की रात " नाटक आधुनिक दूषित सामाजिक तथा राजनीतिक वातावरण को रू-ब-रू करता है । रंगमंच सज्जा तथा संकलनत्रय की ओर नाटककार का ध्यान अवश्य रहा है । वातावरण शिल्प की दृष्टि से नाटककार को काफी सफलता प्राप्त है ।

" अशोक " और " रेवा " नाटक रंगमंच की दृष्टि से न लिखे जाने के बावजूद भी नाटककारने रंगमंच संबंधी अनुकूल तथा आवश्यक सूचनाओं का पालन किया है । " न्याय की रात " रंगमंच की दृष्टि से पूर्णता सफल कृति है । यह नाटक रंगमंच पर खेला जा चुका है । आधुनिक तंत्रज्ञान के आधार पर " अशोक " तथा " रेवा " जैसे पाठ्य-नाटक भी रंगमंच पर सफल सिद्ध हो सकते हैं । "न्याय की रात " में रूप सज्जा, वेशभूषा, दृश्यसज्जा, प्रकाश योजना , ध्वनि एवं संगीत संयोजन नाटयतंत्र के अनुकूल हैं और इस पर नाटककारने काफी ध्यान दिया है । इन नाटकों की पात्र-योजना अभिनय के अनुकूल हैं । नाटककारने बीच-बीच में अभिनय संबंधी निर्देश दे दिए हैं ।

चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटक भाषा शिल्प की दृष्टि से नाट्यानुकूल ही हैं । विवेच्य नाटकों की भाषा पात्र की योग्यता के अनुसार (पात्रानुकूल) नाटकीय, सुस्पष्ट एवं सरल है । इनमें व्यंग्यात्मक , प्रतीकात्मक , वर्णनात्मक तथा काव्यात्मक भाषा का प्रयोग हुआ है इसके साथ-साथ मुहावरों कहावतों एवं सुक्तियों से युक्त भाषा का भी प्रयोग मिलता है । पात्रों की भाषा में अरबी, फारसी, देशज, उर्दू , संस्कृत आदि भाषा के शब्दों का प्रयोग है । "न्याय की रात " आधुनिक परिवेश का होने के कारण इसके पात्रों की भाषा पर अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रभाव है ।

इन नाटकों का उद्देश्य समाज में शांति, सुव्यवस्था और युद्ध के प्रति घृणा निर्माण करना रहा है ।इसके साथ ही नागरिकों में देशभक्ति, राष्ट्रवाद जगाना, उनमें राष्ट्रीय तथा सामाजिक संवेदना की लहर दौड़ना तथा देश में गहरी भावात्मक एकता का प्रचार, प्रसार एवंकला, सभ्यता और संस्कृति का विकास एवं संवर्धनरहा है ।ये नाटक समाज में नीतिमूल्यों की प्रतिष्ठापना , वसुधैव कुटुम्बकम की भावना, वर्गहीन समाज की प्रतिष्ठापना तथा समाज में आदर्श स्थापित करने के उद्देश्य की पूर्ति करते हैं । इन नाटकों के शीर्षक मार्मिक, संक्षिप्त, आकर्षक एवं विषयवस्तु के अनुकूल हैं ।

निष्कर्षतः चंद्रगुप्त विद्यालंकार जी के नाटक शिल्प की दृष्टि से सफल हैं ।